Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

॥ ओ३म् ॥

जन ज्ञान

साप्ताहिक

३० मई १९७६

मूल्य ५० पैसे

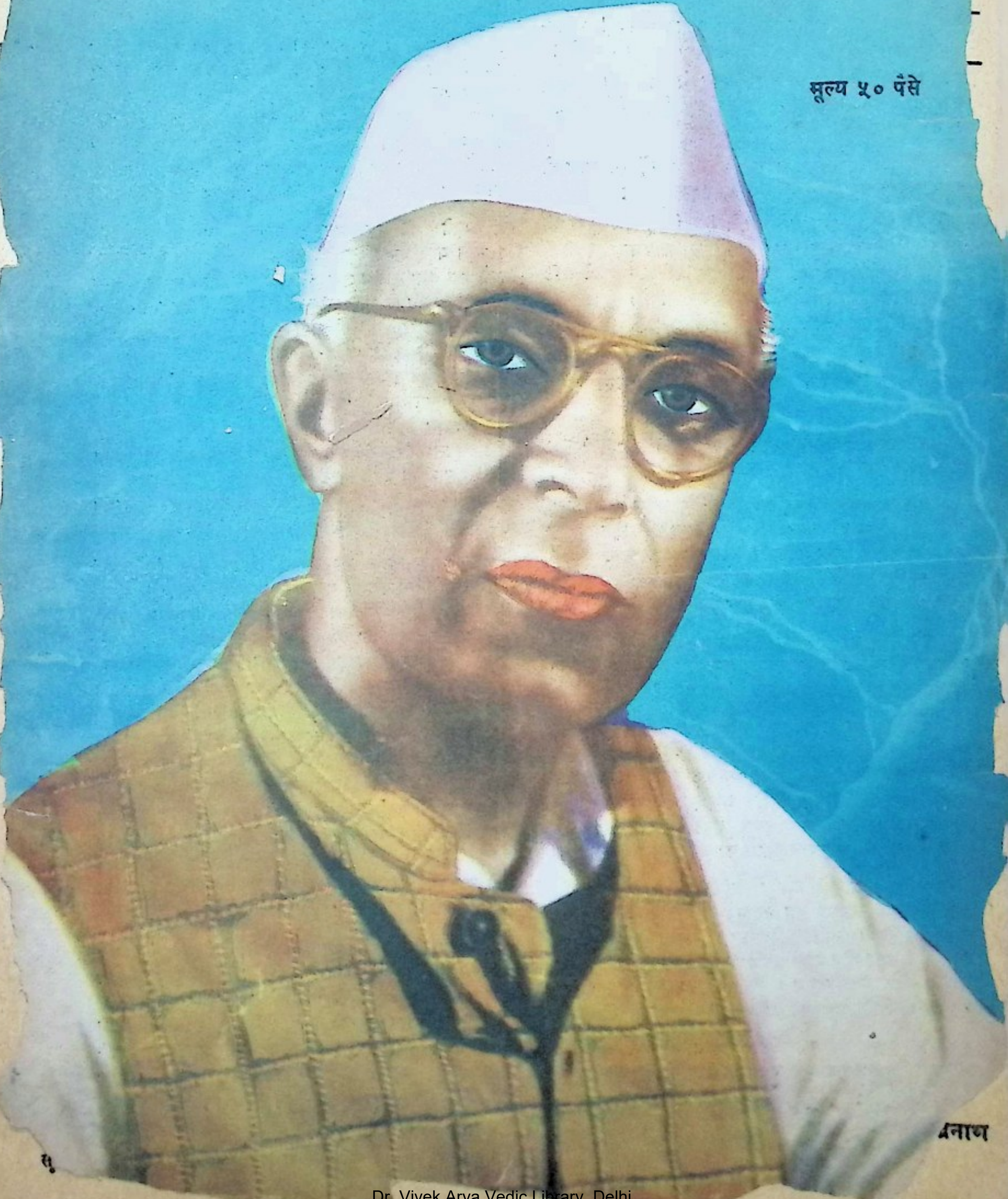

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

— सत्येन्द्र

२८ मई जिनका ९३वां जन्म दिवस है

स्वातन्त्र्यवीर सावरकर

स्वातंत्र्यवीर विनायक दामोदर सावरकर—अनेक दृष्टियों से विश्व का अनूठा व्यक्तित्व ! सावरकर विश्व इतिहास में अनेक दृष्टियों से असाधारण रहे ।

वह विश्व के प्रथम लेखक थे जिनकी महान् रचना १८५७ का स्वातन्त्र्य समर' प्रकाशित होने से पहले ही ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर ली ।

—सावरकर प्रथम राजबन्दी थे कि जिन्हें एक साथ दो जन्म के आजन्म कारावास का दंड दिया गया ।

—सावरकर प्रथम बैरिस्टर थे कि जिन्हें बैरिस्टरी की परीक्षा में सफलता प्राप्त करने के बावजूद इसलिए उपाधि प्रदान न की गई कि उन्होंने ब्रिटिश सत्ता के प्रति वफादारी की शपथ लेने से इन्कार कर दिया ।

—वीर सावरकर प्रथम भारतीय थे जिन्होंने १२ वर्ष की अल्पायु से ही अपने रक्त को समर्पित कर मातृभूमि की स्वतंत्रता के लिए सर्वस्व समर्पण का संकल्प ग्रहण किया ।

—सावरकर प्रथम भारतीय देशभक्त थे, जिन्होंने पूना में विदेशी वस्त्रों की होली जलाई ।

—वीर सावरकर आधुनिक भारत के प्रथम राजनीतिज्ञ थे जिन्हों 'हिन्दुत्व' नामक ग्रंथ की रचना कर हिन्दुत्व की एक तर्क सम्मत व्याख्या की । स्वामी श्रद्धानन्द जी ने कहा था कि इस ग्रन्थ को पढ़कर वैदिककालीन ऋषियों की महान् मेधा का स्मरण हो आता है ।

—वीर सावरकर ने ही १९३८ में हिन्दू महासभा के अध्यक्ष के रूप से प्रथम वार राष्ट्र के सैनिकीकरण और देश के उद्योगीकरण का महान् मंत्र प्रदान किया था ।

—भारतीय राष्ट्र के इस महान् राजनीतिज्ञ का जन्म २८ मई, १८८३ को नासिक जिले के छोटे से ग्राम मंगूर में हुआ था और इसने स्वातन्त्र्य लक्ष्मी की आराधना के पावन अपराध में १३ वर्ष तक अण्डमान (काला पानी) में कठोर यातनाएं झेलो तथा तदुपरांत १४ वर्ष तक विभिन्न स्थानों पर स्थानबद्धता का जीवन यापन किया ।

—दुर्दान्त वज्र दण्डों और बहुविधि यातनाओं और उत्पीडन के बावजूद यह महान् मनीषी अपने शौर्याग्रह में अविचल और अटल ही रहा । अपनी सम्पूर्ण प्रज्ञा, विद्वत्ता, क्षमता और ज्ञान का अपरिमित भंडार स्वराष्ट्र को समर्पित कर इस महान् मनीषी ने २६ फरवरी, १९६६ को आत्मार्पण कर अपनी जीवन लीला समाप्त की ।

—इस नरपुंगव का जीवन भारतीयों को सदैव ही स्वराष्ट्र की स्वतंत्रता की रक्षार्थ सर्वस्व समर्पण की प्रेरणा प्रदान करता रहेगा । ◆

आवरण पृष्ठ कथा

गुलाब का फूल

★★★

१४ नवम्बर, १८८९ को स्वदेश के स्वनाम धन्य नेता पं० मोतीलाल नेहरू के कुलदीपक के रूप में जन्मे महान् राष्ट्रनायक पं० जवाहरलाल नेहरू की स्मृति २६ मई को हो आनी स्वाभाविक ही है । क्योंकि २६ मई इस महापुरुष की पुण्यतिथि है । उसी तिथि को इसने १९६४ में चिर विदाई ली थी और अनन्त वायु को सुयश सौरभ का दान देकर गुलाब का यह अमर प्रेमी महाप्राण कर गया था ।

स्वदेश की स्वतन्त्रता हेतु वैभव एवं संपन्नता को ठुकराने वाले एवं 'विश्व इतिहास की झलक' प्रस्तुत करने वाले इस महान् राष्ट्र भक्त ने अपनी कल्पना एवं निष्ठा के अनुसार जीवन की अन्तिम घड़ी तक स्वदेश की सेवा की । उसने आजादी की रूठी रमणी को रिझाने के लिए कारागार की कोठरियों में यातनाएं झेलीं तो प्रचण्ड जन आंदोलनों का सफल नेतृत्व किया । देश में समाजवादी समाज रचना एवं भौतिक समृद्धि लाने के लिए उसने अहर्निश प्रयास किए । धर्मनिरपेक्षता में उन्हें आस्था रही और मार्क्सवादी दर्शन ने भी उन्हें प्रभावित किया किन्तु यह भी एक अकाट्य सत्य और तथ्य है कि भारत की महान सभ्यता, महान् सांस्कृतिक विरासत एव महापुरुष ही उसकी प्रेरणा के केन्द्र रहे ।

'विश्व इतिहास की झलक' देखने और विदेशों में बही राजनीतिक बयारों का सांगोपांग गहन अध्ययन करने के बावजूद भारतभूमि का यह वरेण्य पुत्र, स्वातंत्र्य लक्ष्मी के राजमुकुट का यह 'जवाहर' भारत की पावन माटी, अपने क्रियाकलापों की इस घाटी और स्वदेश के कण-कण को ही स्वर्गतुल्य मानने की परिपाटी का भी पुरस्कर्ता था । इसीलिए तो उसने अपनी वसीयत में जहाँ यह उद्घोष किया कि 'इस तरह के अनुष्ठानों में मेरी कोई आस्था नहीं है और इसी तौर पर उन्हें झेलना पाखण्ड होगा और यह अपने लोगों को और दूसरों को धोखे मे डालने का प्रयास होगा' वहाँ यह भी लिखा कि "मैं चाहता हूँ कि मेरे मरने के बाद मेरा दाह संस्कार हो । अगर मेरी मृत्यु विदेश में हो तो वहीं मेरी दाह संस्कार किया जाए, पर मेरी अस्थियां इलाहाबाद लाई जाए । इनमें से मुट्ठी भर गंगा में प्रवाहित की जाएं...।"

इतना ही नहीं, अपितु इसी वसीयत में गंगा के प्रति भारतभूमि के इस महान् लाल की अडिग निष्ठा इन शब्दों में उभर उठी, गंगा विशेषकर भारत की वह नदी है, जिसे जनता प्यार करती है और जिसके इर्द-गिर्द उसकी जातीय स्मृतियाँ, उसकी आशाएं और आशंकाएं उसके विजय और पराजय का ताना-बाना जुड़ा हुआ है । गंगा

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म्
जनज्ञान
कृण्वन्तो-विश्वमार्य्यम्
वेदाः
हिन्दी साप्ताहिक
नई दिल्ली

वर्ष १ ● रविवार ३० मई १९७६ : २३ ज्येष्ठ २०३३ ● अंक १५

शताब्दी का संदेश

रोहतक में २८-३० मई को शताब्दी, महोत्सव हो रहा है। इस आयोजन पर लाखों रुपया व्यय होगा। भाषण, सम्मेलन, प्रदर्शन सभी होंगे, तालियां बजेंगी, नेता आयेंगे और सम्मेलन समाप्त हो जाएगा।

हमारा निवेदन है कि इस अवसर पर हम इतिहास को नया मोड़ देने का प्रयत्न करें। वीर भूमि रोहतक का वातावरण सदा भारत की रक्षा करता रहा है। आज भी यह क्षेत्र आर्यसमाज को नयी दिशा प्रदान कर सकता है।

हरयाणा की भूमि पर गूंजते वेद के स्वरों को सुनकर यदि आर्य गण यह संकल्प लें कि हरयाणा के प्रत्येक ग्राम में हम आर्यसमाज स्थापित करेंगे, तो शताब्दी महोत्सव को हम सफल समझेंगे।

अनेकता और विघटन का विष इस पवित्र धरती पर भी फैलना आरम्भ हो गया है। गृह कलह से अधिक विनाशकारी और कुछ नहीं, इस तथ्य को हम समझें और एकता के मंत्र का जप करते हुए प्यार की पावन सुरसरि प्रवाहित करें, यह समय की मांग है।

शिष्य गुरू के चरणों में बैठकर छोटा नहीं होता। विरजानन्द का दंड ही था जिसने ऋषि दयानन्द को वज्र रूप दिया। अतः सभी परस्पर यथायोग्य व्यवहार कर फूट को समाप्त करने का व्रत लें और यह घोषणा करें कि हम सब आर्य एक हैं।

क्रांति का नाद, शांति का संदेश गुंजाता है। प्यार अमृत बरसाता है। **आपस में लड़ने वालो! यह मत भूलो कि तुम अपनी मां आर्यसमाज की अपने हाथों हत्या कर रहे हो!**

सत्य जागे, धर्म उभरे और प्यार के गीत सर्वत्र गूंजें, यह हमारी हार्दिक कामना है। हम चाहते हैं कि रोहतक के शताब्दी समारोह में फूट की अर्थी उठाने का निर्णय सभी मिलकर कर डालें।

ग्रामों में शराब, सिगरेट, कुरीतियां फैशन अब प्रविष्ट हो रहा है। देश बरबादी की ओर बढ़ रहा है, हम न बदले तो फिर कुछ नहीं बचेगा, अतः सुनो शताब्दी महोत्सव आज एकता के मार्ग पर चलने का आवाहन कर रहा है।

—भारतेन्द्रनाथ

सम्पादक
पंडिता राकेश रानी
●
सह-सम्पादक
कु० आभा
दूरभाष : ५६६६३९
: २०१५८४
●
पता : वेद मंदिर
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१, नाईवाला]
करौल बाग, नई दिल्ली-११०००५
●
मूल्य एक प्रति ५० पैसे
वार्षिक मूल्य २०)
विदेश में ६ पौंड (हवाई डाक से)
४ पौंड : (समुद्री डाक से)
आजीवन ३०१ रु०
●
दयानन्दाब्द : १५१
सृष्टि संवत् : १९६०८५३०७६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपनी बात

शक्ति—भक्ति—साधना आज है पुकारती ।

भारत की आत्मा अंधकार में ग्रस्त है। धर्म गहरी गुफा में अपनी अन्तिम घड़ियां गिन रहा है। देश उन्नति के साथ-साथ सर्वनाश का ग्रास बनता जा रहा है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि जैसे कुछ बचेगा ही नहीं।

आर्यसमाज ने १८५७ के बाद देश को नया जीवन दिया था, और आज १९७६ की झंझा में केवल आर्य-समाज ही है जो 'भारत' की भारतीयता की रक्षा कर सकता है।

किन्तु इस के लिए हमें आर्यसमाज को ऋषि दयानन्द का आर्यसमाज बनाना होगा। १८७५ से १९२५ तक का १९४० तक का आर्यसमाज। जिस आर्यसमाज के नेता थे स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा नारायण स्वामी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द।

आज के आर्यसमाज का सबसे बड़ा अभिशाप वर्तमान नेता हैं। इनमें न शक्ति है न श्रद्धा, न विश्वास है न भावना। बस केवल एक गुण है इनमें पदों के मोह का। इनकी गद्दी बने रहे, और इन्हें कुछ भी तो नहीं चाहिए।

इसलिए देश विदेश के सभी आर्यों को कोई ऐसा उपाय खोजना चाहिए कि इन नेताओं को कैसे ठीक किया जाए। साथ ही हमारा यह भी कर्तव्य है कि हम स्वयं भी नेता न बनकर सेवक बनें। काम करें, अपने-अपने क्षेत्र की सुधि लें।

वर्तमान ज्वालामुखी बन गया है। अग्नि धधक रही है। हमें सोचना है इस ज्वाला का उपाय, बरसाना है अमृत, और लाना है सतयुग का वातावरण।

जो लोग नारों में विश्वास रखते है, उन से आप क्या आशा रख सकते हैं? कुछ व्यक्तियों ने ४ वर्ष पूर्व जोरदार नारे दिए थे? वे आज कहां हैं? जनता ने उन पर लाखों लुटा दिए''' क्या बना उनका'''?

काम करने से होता है। जीवन साधना से पलता है। दीप के लिए तेल चाहिए और विजय के लिए त्याग! भाषण धूर तालियां बजवा सकते हैं क्रान्ति नहीं कर सकते!

'हिटलर ने कहा था जनता मूर्ख होती है, विश्वास नहीं होता था, पर आज अनुभव बता रहा है कि उस की बात कितनी सच थी। जनता बहकती है उसमें विवेक नहीं होता, और इसी का अभाव हमें पतन के गर्त में गिरा देता है।

हम आज ऐसी स्थिति में नहीं कि कोई लम्बी चौड़ी घोषणा कर सकें किन्तु नम्रता पूर्वक यह कहने की अनुमति चाहेंगे कि अगर हमें ५-७ व्यक्ति भी बलिदान भाव के मिल जाते तो इस देश का कायाकल्प करने की दिशा में हम कुछ चरण बढ़ा सकते।

विपरीत परिस्थितियां हों या सामने हिमालय हो हमें बढ़ना है और विजय प्राप्त करनी है। नए युग को नयी दिशा देकर हमने अलख जगानी है। धर्म का सत्य स्वरूप उभरे और अज्ञान का अंधेरा भागे यह हमारी इच्छा है।

पता नहीं कैसे पूरी होगी पर होगी अवश्य, यह विश्वास ही हमारी पूंजी है।

जन-ज्ञान भारी घाटे में है। ४०) वार्षिक की सामग्री २०) में देते हैं पर बहुत से सदस्यों के सोचने का ढंग व्यापारिक ही रहता है और श्रद्धा या धर्म प्रचार की भावना के अंकुर उनके हृदय में नहीं उत्पन्न होते। हम इसे अपनी ही दुर्बलता समझते हैं।

फिर भी हमारा यह नम्र निवेदन है कि जो सदस्य भविष्य में सदस्य न रहना चाहें वे १५ पैसे का कार्ड डालकर हमें सूचित तो अवश्य कर दिया करें। इस कृपा के लिए हम आभारी होंगे।

वेद भाष्य पूर्ण हुआ पर

वेद भाष्य का कार्य मार्च १९७६ में पूर्ण हुआ। प्रण पूर्ति प्रभु ने की, इसे हम एक अनूठा चमत्कार ही कह सकते हैं। पर इसके लिए संस्थान को जो मूल्य चुकाना पड़ा, उसकी पूर्ति कैसे होगी, समझ नहीं आता। दो वर्ष तक अन्न त्याग कर श्री भारतेन्द्रनाथ जी ने अपना स्वास्थ्य चौपट कर लिया। दिन रात १८ घंटे काम मुझे भी करना पड़ रहा है।

इतने पर भी इस काम की पूर्ति के लिए बाजार से एक लाख रु० के लगभग ऋण इस आशा से लेकर कार्य पूर्ण किया था, कि आर्य जनता वेदभाष्य की पूर्णता से संतुष्ट होगी, और थोड़ा-थोड़ा करके बोझ बांट लेगी, पर जो सहयोग मिला वह न मिलने के बराबर था।

इस समय हम अत्यन्त चिन्तित हैं इसलिए कि क्या जो प्रचार के चरण बढ़ाए थे, वे रोक दिए जाएं। आप के द्वार पर आकर मांगने का न अवकाश है न औचित्य ही, क्योंकि उत्तम दान वही है जो श्रद्धा से दिया जाए।

क्या आप कार्य के लिए दान नहीं दे सकते? उत्सवों पर, नेताओं को, आप हजारों दे सकते हैं तो क्या वेद सत्यार्थ प्रकाश और ऋषि जीवन प्रचार के लिए आप १००) भी नहीं भेज सकते?

जिन्हें प्रभु ने दिया है वे मेरी प्रार्थना पर ध्यान दें और ११)- २५)- ५१)- १०१)- १००१)। जैसी भी स्थिति हो इन पंक्तियों को पढ़ते ही तुरन्त भेजें—का वर्षा जब कृषि सुखानी।

—राकेशरानी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमें यह कहना है

हिमगिरि भी अब डोल उठा है।

पिछले कुछ दिनों से हमारा मन विचित्र स्थिति में प्रश्न चिन्ह लेकर खड़ा है। दिन रात सोच रहा हूं कि क्या आज के युग में कार्य करना ही अपराध है ?

सत्य और असत्य को समझने का विवेक अब कहां है ? कार्य और घोषणाओं में महत्व झूठी घोषणाओं का बन गया है।

पिछले २५ वर्षों में निरन्तर १८-१८ घंटे प्रतिदिन आर्यसमाज का कार्य किया। इन २५ वर्षों में २५) की पूंजी भी अपने पास संग्रह नहीं कर सका। सारी बुद्धि विवेक-शक्ति और भक्ति से ऋषि का सन्देश फैलाने का प्रयत्न किया। किन्तु क्या मिला ? नेताओं का मार्ग अलग—हमारा अलग, शासन उन का, हम काम में विश्वास रख काम करते और परिणाम यह कि कोई हमारा न बन सका।

जनता ने काम का मूल्य नहीं समझा, नेताओं को इसमें अपना अपमान नजर आया, इस तरह हम अकेले रह गए। और अब अपने जीवन के अनमोल क्षण, उत्तम स्वास्थ्य खोकर आज हम यह सोचने पर बाध्य हो गए हैं कि क्या जो हमने आज तक किया था वह क्या सब गलत था, अपराध था ? जीवन के हर कदम पर हमने ऋषि दयानन्द के गीत गाए। स्वयं के लिए कुछ भी न करते हुए लगातार २५ वर्ष हमने लेखनी-वाणी से ऋषि की आवाज गुंजायी। लोग आर्यसमाज को छोड़ कर राजनीति में गए पर हमने राजनैतिक पृष्ठभूमि और बना बनाया क्षेत्र छोड़ कर जो कुछ किया आर्यसमाज के लिए किया।

यह सब कुछ किसी पर एहसान नहीं था, हमारा कर्तव्य था। हमें अपने कामों के लिए कोई अफसोस भी नहीं है। हमें जीवन के हर क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता मिली और शायद यही हमारे विरोध का सबसे बड़ा कारण बना।

आर्यसमाज शताब्दी पर भी हमने १५ से अधिक बार लाखों की संख्या में सत्यार्थप्रकाश और ऋषि जीवन छपाए। लागत से भी कम मूल्य पर दिए—वेद भाष्य १५५०० घरों तक पहुँचाया''' यह सब कुछ बिना पूंजी के भगवान भरोसे हुआ। सफलता मिली प्रचार में पर''' हमारा स्वास्थ्य टूटता गया, हम खोखले हो गए और आज एक विशाल ताना बाना तैयार कर हम उस मल्लाह की खोज में हैं जो पतवार हमारे हाथों से संभाल सके।

हमारा मार्ग कांटों से भरा है। इसमें सम्मान नहीं गालियां, मालाएं नहीं कांटे और प्रशंसा नहीं, निन्दा मिलती है। दिन रात की परेशानियां-ऊपर से किसी भी प्रकार का कोई लाभ नहीं, फिर कौन माई का लाल चलेगा इस दुर्गम पथ पर'''।

हम निराश नहीं हैं, फिर भी मन में एक पीड़ा है, कसक है, वेदना है, अपनों की उपेक्षा की ! विरोधियों के विरोध से लड़ने का साहस तो हम में है पर अपनों से विरोध हमारी कमर तोड़ देता है।

आर्यसमाज संगठन आज मुकदमे बाजी, गृह कलह और पदलिप्सा की भेंट चढ़ गया है। नेताओं के इस पतन को देखकर ऋषि दयानन्द के भक्तों की आंखों से क्या रक्त के आंसू नहीं बहते''' पर कोई करे तो क्या करे, इस हमाम में सभी नंगे हैं। हमारे सब्र का पैमाना भर चुका है। सभी को हम बिकता हुआ, बदलता हुआ देख रहे हैं। पार्टी बाजी ने इस विशाल संगठन को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। कोई सोचने वाला, कुछ करने वाला नहीं, सभी को गद्दियां प्यारी हैं।

भूकम्प आने वाला है, सब कुछ हिल रहा है। धर्म की, सत्य और न्याय की परिभाषाएं बदल रही हैं। हम देख रहे हैं बरबादी का यह दौर, मन विद्रोह कर रहा है, पर एकाकी क्या करें, कुछ समझ नहीं आ रहा।

आप बता सकें तो बताइए, कि किया क्या जाए, सर्वनाश के तूफान के समक्ष अडिग चट्टान बन कौन, कैसे खड़ा हो ? हिमगिरि अब डोल उठा है, कोई रोक सकेगा क्या ? ? ?

स्वयं अपना मार्ग बनाओ

आज जो भी उलझनें हैं, उनका एक मात्र हल है, कि सभी स्वयं मार्ग बनाएं। केवल ऋषि दयानन्द को नेता माने और उन्हीं के आदेशों का अक्षरशः पालन करें।

प्रत्येक आर्यसमाज के अधिकारी यदि सारे झगड़े छोड़कर अपने केन्द्रों की ओर न देखकर अपनी शक्ति और सामर्थ्य से केवल अपने ही क्षेत्र में लगे तो जहां हमारा काम तेजी से बढ़ सकता है, वहां हम बहुत सी व्यर्थ की उलझनों से भी बच सकते है।

जिन्हें काम प्यारा है, ऋषि दयानन्द पर श्रद्धा है वे सब कुछ भूल जाएं और केवल अपने-अपने क्षेत्र को आर्य बनाने का, वैदिक विचार धारा फैलाने का व्रत लें तभी कुछ हो सकेगा। —भारतेन्द्रनाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—राजकुमार आर्य

अनुशासन का महत्व

●●●

एक बार हिटलर और मुसोलिनी में बहस हुई कि किसके सैनिक अधिक अनुशासन बद्ध हैं। हिटलर ने तुरंत ही अपने सैनिकों को बुलाया। उस समय वे सब एक विशाल भवन की तृतीय मंजिल पर थे। हिटलर ने अपने 3 सैनिकों को छत के एक किनारे पर पंक्तिबद्ध होकर खड़े होने का निर्देश दिया। जब वे एक पंक्ति में खड़े हो गये तो उन्हें आदेश दे दिया गया कि आदेश मिलते ही तुरंत नीचे कूद जाएं और वास्तव में आदेश मिलते ही वे तीनों सैनिक निःसंकोच तुरंत नीचे कूद गए थे, यह था सैनिक अनुशासन का एक उदाहरण।

किन्तु यह अनुशासन है क्या? क्यों इन तीन सैनिकों ने उच्च अधिकारी के आदेश पर अपने प्राणों की भी चिन्ता नहीं की? वस्तुतः अनुशासन का अर्थ है 'मानसिक एवम चरित्र संबंधी परीक्षण।' किन्तु वास्तविक कार्यक्षेत्र में यह मस्तिष्क की एक ऐसी अवस्था मानी जाती है जो मानव में अपने वरिष्ठ अधिकारी की आज्ञा पर कार्य करने की क्षमता का विकास कर सकें और एक संगठन में रहते हुए अधिकाधिक सहयोग की भावना को प्रेरित कर सके।

सही प्रशिक्षण के आधार पर संगठन के समान ही व्यक्तिगत जीवन में भी अनुशासन की भावना को संजोया जा सकता है। किसी भी व्यक्ति में अनुशासन की भावना के सृजन हेतु उसमें आत्मनिर्भरता तथा उत्तरदायित्व की भावना आवश्यक है जिसका हमें आज आर्य-समाज के सदस्यों में अभाव प्रतीत होता हैं।

सैनिक अनुशासन

सशस्त्र सेनाओं का तो अनुशासन वस्तुतः आत्मा ही है। यदि इसे विवेकपूर्वक और सही ढंग से सुदृढ़ नहीं किया गया तो सेनाओं में सही अर्थों में सैनिक अपने दायित्व का निर्वाह ही नहीं कर पाएगा। अनुशासन के अभाव में तो सेना सशस्त्र उपद्रवी लोगों की भीड़ मात्र ही बन जाती हैं, जो स्वदेश के लिए शत्रुओं की अपेक्षा भी अधिक विनाशकारी सिद्ध हो सकती हैं। सही अर्थों में अनुशासन एक ऐसा गुण है कि जो सेना और जन-साधारण में भिन्नता ला देता है। इसी गुण के कारण साधारण नागरिक की दृष्टि में गणवेश पहने सैनिक का आदर बढ़ जाता है। अनुशासन को सशस्त्र सेनाओं के चरित्र संबंधी आधार के रूप में माना जा सकता है।

सशस्त्र सेना में प्रत्येक सैनिक का व्यक्तिगत रूप से अनुशासित होना और साथ ही सम्पूर्ण बल को संगठित रूप से अनुशासनबद्ध होना भी आवश्यक है। यह तो स्पष्ट है कि सैनिक अनुशासन मुख्यतया निर्विवाद आज्ञा-पालन ही होता है। वस्तुतः यह किसी सैनिक या सैन्य दल का वह गुण है जो उन्हें वे कठिनाईयां झेलने के लिए प्रेरित करे, जिनका उन्होंने अपने जीवन में कभी नाम नहीं सुना हो और स्वकर्त्तव्य की पूर्ति हेतु अपनी प्रसन्नता ही नहीं अपितु जीवन भी संसार के किसी सुदूर कोने में भी बलिदान हेतु प्रेरित करे। यह मस्तिष्क की वह स्थिति है, जिसमें से कोई भी सैनिक अपने उच्चाधिकारी के आदेश पर बिना किसी प्रकार के प्रलोभन के ही मृत्यु को भी गले लगाने को तैयार हो जाता है।

अनुशासनः महाबल

विश्व इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण हैं जिनसे यह विदित होता है कि प्रतिद्वन्द्वी सेनाओं के पास अस्त्र-शस्त्र एवम् अन्य युद्ध सामग्री एक जैसी ही थी। शक्ति में भी वे समतुल्य ही थीं। किंतु अन्त में विजय का वरण उस पक्ष ने किया जो अधिक अनुशासन बद्ध था। वस्तुतः आज के युग में किसी सैनिक की क्षणभर की अनुशासन-हीनता भी उसके राष्ट्र के लिए विनाशक बन जाती है।

सेना में अनुशासन की महत्ता केवल युद्ध काल में ही नहीं अपितु शांतिकाल में भी यथावत बनी रहती है। क्योंकि अनेक बार सर्वथा निर्जन स्थानों में सैनिकों को स्वदेश की सीमाओं के सजग प्रहरी के तौर पर तैनात होना पड़ता है। वहां अनुशासन की भावना के वशीभूत ही सैनिक निष्ठा एवम ईमानदारी के साथ अपने कर्त्तव्य की पूर्ति कर सकता है। अन्यथा अत्यधिक ठण्डे या अत्यधिक उष्ण स्थलों में उसका मन लग ही नहीं पाता। वस्तुतः अनुशासन सेनाओं के लिए जितना आवश्यक है, उतना ही राष्ट्र जीवन में भी अनुशासन का स्थान ही सर्वोपरि है। अनुशासनबद्ध राष्ट्र ही प्रगति पथ पर आरूढ़ होकर विश्व में अग्रगण्य बन सकता है। ये अनुशासन ही राष्ट्र की आत्मा है।

सत्यार्थ प्रकाश

पुस्तक साइज : २००) सैंकड़ा, बड़ा साइज : २५०) सैंकड़ा, सजिल्द : ३००) सैंकड़ा, कपड़े की जिल्द : ५००) सैंकड़ा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—पं० वीरसेन वेदश्रमी

वायु प्रदूषण का निवारण सम्भव

प्राचीन काल में वायु प्रदूषण का उपाय था—

आज अनेक समृद्ध देशों के समक्ष वायु प्रदूषण की समस्या गंभीर रूप से उपस्थित है। हमारे देश के भी अनेक बड़े नगरों के लिये चिन्तनीय स्थिति बन गई है। इस गंभीर समस्या का समाधान स्वदेश की प्राचीन पद्धति और वेद में विद्यमान है। इसी को पुनः अपनाने से वायु प्रदूषण सुगमता से रोका जा सकता है और नष्ट भी किया जा सकता है। हमारे ऋषि-मुनियों ने मानव जाति से उत्पन्न स्वाभाविक वायु प्रदूषण पर भी विचार किया था और उसके परिमार्जन के लिये उन्होंने एक पद्धति का वेदों से आविष्कार किया था।

वायु प्रदूषण कर्त्ताओं का कर्त्तव्य

आज कल वायु प्रदूषण की उत्पत्ति तथा विस्तार एवं प्रदूषण के घनत्व की वृद्धि कल कारखानों द्वारा तो हो ही रही है परन्तु इसके अतिरिक्त डीजल, पेट्रोल, गैस, घासलेट आदि विविध इन्धनों के व्यापक प्रयोग से भी अत्यन्त तीव्र गति से हो रही है। वायुयान, बस, ट्रक, ट्रैक्टर, इन्जिन, कार, स्कूटर आदि की उत्तरोत्तर वृद्धि एवं उपयोग से तथा अणुबम विस्फोटों से वायु प्रदूषण अधिकाधिक बढ़ता ही जायेगा। ऐसी स्थिति में वायु प्रदूषण कर्त्ताओं का ही यह प्रधान कर्त्तव्य है कि वे वायु शोधन का कार्य भी नियमित रूप से अवश्य करें।

वायु प्रदूषण निवारण संभव

शुद्ध वायु जीवन दाता है। अशुद्ध वायु रोग, दुःख और मृत्यु कारक है। वायु प्रदूषण के निवारण का सरल मार्ग वेद ने हमें निम्न प्रकार बताया है—

आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद्रपः।
त्वं हि विश्व भेषजो देवानां दूत ईयसे॥
(ऋग्वेद१०।१३७।३)

अर्थात्-भेषज वायु-औषधियों से पूर्ण वायु का प्रवाह हमें सब ओर भली प्रकार प्राप्त हो और जो दूषण, अशुद्धि या अनिष्ट कारक है वह हमसे बहुत दूर जाए। भेषज पूर्ण वायु विश्वभिषक्-विश्व का चिकित्सक सबको आरोग्यता प्रदान करने वाला तथा जीवन है। यह विश्वभिषक् वायु वैदिक विद्वानों अर्थात् यज्ञ विज्ञान वेत्ता वैज्ञानिकों का दूत रूप से बनकर कार्य करता है। अतः भेषज वायु द्वारा प्रदूषित वायु का शोधन तथा परिमार्जन हो सकता है।

भेषज पूर्ण वायु जीवन दाता है

औषधियों से पूर्ण वायु-मण्डल समस्त विश्व को जीवन प्राण तथा आयु प्रदान करता है। जिन पर्वतीय स्थानों में अनेक प्रकार की औषधि-वनस्पतियाँ होती हैं, उनका जलीय सूक्ष्म सोम; अंश, पृथिवी, सूर्य एवं वातावरण के ताप से धीरे-धीरे उनमें उड़कर वहाँ के वायु मण्डल में भरता रहता है। इससे पर्वतीय स्थानों में सोम-भेषज वायु अर्थात् आरोग्य प्रद वायु प्रधान रूप से विद्यमान रहती है। जो व्यक्ति उन स्थानों में जा कर उस भेषज वायु का सेवन करते हैं, उनको स्वास्थ्य लाभ अति शीघ्र स्वाभाविक रूप से हो जाता है और रोग भी दूर हो जाते हैं। इसलिए वेद ने कहा—

वात आ वातु भेषजं शंभु मयोभु नो हृदे।
प्राण आयूंषि तारिषत्॥ (ऋग्वेद १०।१८६।१)

अर्थात्—भेषज पूर्ण वायु अच्छे प्रकार से सब ओर चले। वह भेषज पूर्ण वायु कल्याण करने वाली सुख देने वाली हमारे हृदयों के लिये सुखकारी हों। हमें विविध प्रकार से जीवन प्रदाता हो। इस प्रकार ज्ञात होता है कि भेषज पूर्ण वायु की व्याप्ति, प्रवाह, गति आदि से विश्व का जीवन सुखी होगा और आयु की वृद्धि होगी। इसी से प्रदूषित वायु का निवारण होगा। अतः भेषज पूर्ण वायु के निर्माण, प्रसारण और व्याप्ति का प्रयत्न आवश्यक है।

प्रत्येक कल कारखाना भेषज वायु का भी निर्माण करे

भेषज पूर्ण वायु के निर्माण एवं प्रसारण का प्रयत्न भी उन सभी स्थानों से होना आवश्यक है, जिन स्थानों से वायु प्रदूषण मुख्य रूप से उत्पन्न होता रहता है। अर्थात् प्रत्येक कल-कारखाने का यह आवश्यक कर्तव्य है कि वे जिस प्रकार अपनी फैक्टरी, मिल, कारखाना, मशीन आदि की सफाई-स्वच्छता आदि आवश्यक एवं अनिवार्य रूप से प्रतिदिन कराते हैं, उसी प्रकार उन्हें प्रतिदिन कुछ समय वायु मण्डल की सफाई, शुद्धता, स्वच्छता का भी अनिवार्य रूप से प्रयत्न करना चाहिये।

यज्ञ द्वारा वायु मण्डल शोधन कार्य प्राचीन काल में प्रचलित था

वर्तमान में वायु शोधन का प्रकार ज्ञात न रहने से वायु मंडल दूषित होता जा रहा है। इसके कारण विश्व के जीवन पर कितने भयंकर दुःखदायी परिणाम सम्भव हैं, इसका ज्ञान न होने से वायु के शोधन कार्य की ओर ध्यान भी नहीं गया। अब इस पर ध्यान आकर्षित हुआ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है, अतः उपाय भी सोचे जा रहे हैं। परन्तु हमारे देश में वैदिक काल से ही इस पर ध्यान दिया गया था। उसने यह आवश्यक नित्य कर्तव्य का मनुष्य का नियत किया था कि तुम से जो वायु प्रदूषित होती है, उसका शोधन भी तुम्हें नित्य करना चाहिए और ऋतुजन्यादि भी कारणों से जो प्राकृतिक रूप में वायु प्रदूषण होता है उसका भी शोधन अवश्य करना चाहिये। जिस विधि से वायु प्रदूषणों को नष्ट कर वायु को शोधित किया जाता था उसका नाम-यज्ञ अर्थात् अग्निहोत्र, होम था। आज भी अग्निहोत्र की प्रणाली को अपनाने से वायु प्रदूषण सुगमता से दूर हो सकता है। इसी से भेषज वायु इच्छित मात्रा में तथा इच्छित स्थान में निर्मित होगी और प्रसारित भी होगी।

भेषज वायु का निर्माण कब और कसे ?

प्रातः एवं सायंकाल जब सूर्य की रश्मियां अपने धरातल का प्रथम स्पर्श करती एवं स्पर्श त्यागती हैं उससे २४ मिनट पूर्व एवं २४ मिनट पश्चात् का समय भेषज वायु के निर्माण का है। अर्थात सूर्योदय एवं सूर्यास्त के स्टेन्डर्ड समय से २४ मिनट पूर्व एवं २४ मिनट पश्चात् का समय दोनों समय दोनों समय उपयुक्त है। इस प्रकार ४८ मिनट का प्रातः एवं ४८ मिनट का सायं का समय वायु शोधन का है। इस समय में प्रज्वलित अग्नि में भेषज द्रव्यों की कम से कम १६/१६ आहुतियां दोनों समय देनी चाहिये। इस आहुति कार्य में प्रत्येक आहुति का अन्तर कम से कम १५ सेकिण्ड का होना चाहिये। अर्थात् एक साथ ही सब भेषज द्रव्य अग्नि में नहीं डालना चाहिये। प्रत्येक आहुति की मात्रा कम से कम ६/६ ग्राम होनी चाहियें। आहुति की यह मात्रा फैक्ट्री आदि की प्रति ४०० वर्ग मीटर क्षेत्र के आधार पर ग्रहण करना चाहिये। इसी आधार पर फैक्ट्री के विस्तार से आहुति की मात्रा तथा संख्या में भी वृद्धि हो जायेगी। १६ आहुतियों में ४-५ मिनट का ही समय पर्याप्त है। इस विधि से कार्य करने से भेषज वायु का निर्माण होगा और उससे वायु मण्डल का शोधन होकर वायु प्रदूषण उत्तरोत्तर नष्ट होता जायेगा।

भेषज वायु की क्रियाशीलता

दिन के समय में उत्पन्न वायु प्रदूषण जो आकाश मण्डल के वातावरण में फैलता हुआ ऊपर को बढ़ता है वही रात्रि में वातावरण के ताप में कमी होने से पृथिवी के समीप आकर स्पर्श करता है। वह पुनः प्रातः काल से उत्पन्न प्रदूषण के साथ मिलकर प्रति दिन उत्तरोत्तर घनत्व को प्राप्त हो जाता है। यदि अग्नि होत्र द्वारा शोधक भेषज पदार्थों का वायु में मिश्रण कर दिया जाये तो वह वायु मण्डल में प्रसारित हो जायेगा और दिवस के तापमान के साथ वह भी ऊपर के वायु मण्डल में चला जायेगा। वह थोड़ा सा भी शोधक भेषज पदार्थ विशाल वायु मण्डल के प्रदूषण को नष्ट कर शोधन आदि कार्य में अत्यधिक प्रभावशाली बनकर कार्य करता रहेगा। जैसे एक छोटी सी औषधि गोली भयंकर रोग को अपने से कई गुना अधिक बड़े शरीर से दूर करने में समर्थ होती है वैसे ही छोटी सी आहुति अग्निहोत्र द्वारा समर्थ बन जाती है। जो भेषज द्रव्य अग्नि में थोड़ा-थोड़ा करके जलाया जायेगा वह वायु प्रदूषण रूपी राक्षस को अवश्य नष्ट कर देगा। जब इस शुभ समय में शोधन की क्रिया की जा रही हो तब दोनों समय कुछ समय के लिये बस, ट्रक, कार, स्कूटर आदि चलना बन्द रखें जायें तो और भी अधिक लाभ होगा।

भेषज वायु को प्राकृतिक शक्तियों का सहयोग

अग्नि के माध्यम से प्रातः एवं सायं समय में भेषज पदार्थों की आहुति दी जाती है तो वे भेषज पदार्थ सूक्ष्म तथा अति सूक्ष्म होकर प्रसारित हो जाते हैं। उस समय में सूर्य रश्मियाँ एवं अन्तरिक्ष में व्याप्त जातवेदा अग्नि, विद्युत् आदि भी उन पदार्थों के उस सूक्ष्म अंश को विशेष क्रियाशील करके वायु प्रदूषण को प्रभावहीन कर हमारे जीवन के रक्षक हो जाते हैं क्योंकि उन पदार्थों का स्वभाव विश्व को जीवन प्रदान ही करना है। समान धर्मवाली शक्तियाँ परस्पर मिल जाने के स्वभाव के कारण सामर्थ्य वृद्धि को प्राप्त कर लेती हैं। वेद ने इस रहस्य को निम्न मन्त्र द्वारा प्रकट किया है—

आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्माकं भूत्वविता तनूनाम् ।।
(ऋग्वेद १०।१५७।२)

अर्थात्—जब यज्ञ-अग्निहोत्र होता है तो मध्यम स्थानीय अन्तरिक्ष स्थानीय इन्द्र तत्व, विद्युत्, सूर्य रश्मियों तथा मरुतों के साथ हमारे शरीरों का रक्षक बन जाता है।

भेषज वायु में शोधन की प्राधान्यता

उपरोक्त शक्तियों द्वारा भेषज वायु में जहां विश्व को जीवन प्रदान करने की सामर्थ्य प्राप्त होती है वहां उसमें वायु को शोधित करने की भी विशेष सामर्थ्य प्राप्त होती है। वेद ने निम्न मन्त्र द्वारा यह रहस्य प्रकट किया है—

यं देवासो अजनयन्ताग्निं यस्मिन्नाजुहवुर्भुवनानि विश्वा ।
सो अर्चिषा पृथिवीं द्यामुतेमामृजूयमानो अतपन्महित्वा ।।
(ऋग्वेद १०।८८।६)

अर्थात्—जिस यज्ञाग्नि को यज्ञ विज्ञान के ज्ञाता विद्वान् उत्पन्न करते या प्रकट करके विश्व कल्याण के लिये विविध भेषज तत्वों की उसमें आहुति देते हैं—उसकी ज्वाला, ताप तथा दीप्ति, पृथिवी, द्युलोक और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अन्तरिक्ष लोक (जिससे हमारे वायु मण्डल का प्रधान सम्बन्ध है) को शुद्ध करती हुई अपने सामर्थ्य से स्वप्रभाव को तेजस्वी बनाये रखती है। अग्नि होत्र विज्ञान के इस वैज्ञानिक रहस्य को प्राप्त करने पर यह सुनिश्चित हो जाता है कि प्रातः एवं सायं नित्य यज्ञ क्रिया द्वारा वायु प्रदूषण अवश्य शीघ्र नष्ट ही होगा और विश्व को अवश्य जीवन प्राप्त होगा। इसीलिये वेद ने यज्ञ के लिये—वसोः पवित्रमसि-मातरिश्वनो घर्मोसि (यजुः १।२) तथा वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् (यजुः १।३) कहा है। अर्थात् यज्ञ पवित्र है तथा पवित्र कर्त्ता भी है—वायु का तपाने वाला, शोधन कर्त्ता, प्रसारक तथा गति देने वाला है। यह यज्ञ संसार का हजारों प्रकार से धारण, पोषण तथा रक्षणादि कार्य करने वाला है।

प्रमुख भेषज द्रव्य गौघृत

वायु प्रदूषण दूर करने की प्रमुख भेषज अर्थात् औषधि गोघृत है। जब यह अग्नि होत्र प्रक्रिया में प्रयुक्त होता है तो यह विश्व भिषक् अर्थात् विश्व चिकित्सक का भी कार्य करता है। जितने घृत के खाने से एक व्यक्ति को लाभ एवं आनन्द प्राप्त होता है उतने घृत को यज्ञ में प्रयुक्त करने से सैंकड़ों व्यक्तियों को लाभ पहुंचता है तथा अति सूक्ष्मतर रूप से समस्त विश्व में उसका लाभ वितरित हो जाता है। अग्नि होत्र में घृत का प्रयोग करना उसका विनाश करना नहीं है अपितु उसका सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वाधिक सर्व जनहितार्थ उपयोग है। अत्यन्त विशाल, व्यापक, सरल और कम खर्च का यह मार्ग है। अतः जो अग्नि होत्र में घृत का प्रयोग करता है वह विश्व में प्राण भरता है तथा वह व्यक्ति जो यन्त्र द्वारा वायु प्रदूषण करता है वह विश्व के प्राण को नष्ट करता है। ऐसे व्यक्तियों को चाहिये कि वे अपने यन्त्र संचालन में जितने मूल्य का वायु प्रदूषण करने वाला प्रयुक्त करते हैं उसका आधा या चौथाई अंश वायु शोधन लिये अग्नि होत्र में भी व्यय करें तो वायु प्रदूषण शीघ्र दूर हो सकेगा। थोड़े से घृत का जैसे दाल शाक, कढ़ी या रायता आदि में बघार, छौंक या तड़का देने से सारी दाल, शाक, कढ़ी या रायता में एक अपूर्व प्रभाव एवं स्वाद उत्पन्न हो जाता है और वह संस्कारित तथा सुगन्धित होने के साथ घर के भी वायु मंडल में अपनी सुवास का प्रभाव स्थापित कर लेता है वैसे ही वायु मंडल में अग्नि होत्र कर्म द्वारा घृताहुति रूपी बघार लगाने से समस्त वायु मंडल प्रभावित हो जाता है और उसके दोषों को नष्ट कर देता है।

गौघृत में विष निवारण का प्रभाव

गोघृत का सेवन करने से शरीर के विष दूर होते है। जो व्यक्ति विष खा लेता है या जिसको सर्प काट लेता है तो उसको गोघृत पिलाया जाता है। जिससे विष का प्रभाव शरीर से दूर हो जाता है। आज अन्तरिक्ष में वायु प्रदूषणों से विष एवं विकार करने वाले प्रभाव बढ़ रहे हैं। यदि अन्तरिक्ष को अर्थात्, उसके वायु मन्डल को हम घृत से भर दें तो वह भी निर्विद एवं शुद्ध हो जायेगा। वायु मण्डल को घृत से परिपूर्ण करने का प्रकार अग्नि होत्र यज्ञ ही है—अर्थात् प्रज्वलित अग्नि में कुछ-कुछ समय के अन्तर से थोड़ा-थोड़ा घृत आहुति रूप में अरण करना।

घृत का नाम सर्पि है

सर्प में विष है—परन्तु सर्प वायु मण्डल में से विष को खींच कर वायु शुद्ध करता है—इसलिये उसमें विष की मात्रा बढ़ी हुई होती है। सर्प अपनी वक्र गति-टेढ़ी चाल विशेष से भी प्रसिद्ध है। सर्प के समान घृत भी वायु मण्डल के विष को दूर कर शुद्ध करता है और अग्नि, ताप, तेज तथा सूर्य विद्युत् आदि रश्मियों के साथ घृत भी सर्प की भांति ही तीव्र गति से तथा उसी चाल विशेष से अन्तरिक्ष में सर्पण करता हुआ व्याप्त हो जाता है। रश्मियों-किरणों की गति भी सर्प सदृश होती है। घृत सूक्ष्म होकर जहाँ वायु में वायु प्रवाह सदृश गति करता है वहाँ वह अग्नि, विद्युत तथा सूर्य रश्मियों के साथ उसी सर्पाकृति रूप में गमन करता है। सर्प और सर्पि ये दोनों शब्द एक ही धातु के होने से कर्म साम्य के कारण शब्द साम्य को भी रखते हैं सर्पि का अर्थ हुआ जो रेंगने तथा रेंगाने वाली गति सामर्थ्य को देता है। अर्थात् गोघृत के साथ जिस भेषज पदार्थ की हवि यज्ञ में डाली जायेगी उसको भी घृत अपने साथ अन्तरिक्ष में प्रसारित कर देता है। इसलिये वायु प्रदूषण के निवारण के लिये सर्वाधिक प्रभावकारी उपयोगी और अनिवार्य पदार्थ गोघृत ही है।

घृत का नाम आज्य भी है

वैदिक एवं संस्कृत भाषा में घृत को आज्य भी कहते हैं। वैदिक भाषा के आज्य का अर्थ—आसमन्तात् जयन्ति असुरान अनेन है। अर्थात् इसके द्वारा पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्युलोक पर असुर रूपी वायु प्रदूषण आदि दोषों पर विजय प्राप्त होती है। संस्कृत भाषा के अनुसार अज धातु से आज्य शब्द बनता है। अज धातु का अर्थ गति और क्षेपण-फेंकना है। अर्थात् जब घृत को अग्नि में आहुत किया जाता है तो यह विशेष गति शील हो जाता है। उस गति में फेंकने की भी सामर्थ्य हो जाती है—जिससे वह सब दिशाओं में तथा ऊपर की दिशा में भी फेंके जाने सदृश तीव्र गति से स्वयं तो जाता ही है परन्तु अपने साथ अन्य हुत द्रव्यों को भी ले जाता है। अतः घृता हुति से विशेष शक्ति को प्राप्त हो भेषज द्रव्य दूषित वायु मण्डल के ९९ प्रकार के दुर्गों को सुगमता से नष्ट

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर देता है। वेद ने जघान नवतीर्नव जो कहा है वह ठीक ही है।

घृत का गुप्त नाम अमृत की नाभि

वेद में घृत का गुप्त नाम अमृत की नाभि (यजुः १७।८९) है। संस्कृत भाषा में यह नाम प्रयुक्त नहीं हुआ है। यजुर्वेद १।३१ मन्त्र में भी घृत को अमृतमसि कहा है। घृत का संस्कृत भाषा के अनुसार अर्थ क्षरण-झरना और दीप्ति है। अर्थात् जब अग्नि होत्र में घृत की आहुति पड़ती है तो सर्वत्र अमृत का सरण, झरना, वर्षा, सुख, जीवन व्याप्त हो जाता है। उसमें दीप्ति तेज होने से वह प्रदूषों को भस्मी भूत भी करता है। इसलिये वेद ने घृत को तेजोमि (यजुः १।३१) भी कहा और ऐसा तेज जो किसी से दबाया न जाने वाला अनाधृष्टम् (यजुः १।३१) भी कहा। वेद के पद-पद में विज्ञान भरा हुआ है। परन्तु हम उसकी उपेक्षा किये बैठे हैं।

द्वितीय भेषज द्रव्य-मधु एवं मधुर पदार्थ

मधु को आयुर्वेद में योगवाही माना गया है अर्थात् जिस भेषज पदार्थ के साथ इसका प्रयोग किया जाता है उसके भेषज गुण को यह बहुत अधिक बढ़ा देता है। गोघृत में मिलाकर इसकी आहुति देने से गोघृत की विषनाशक शक्ति, अमृत प्रदान करने की शक्ति, तेजस्विता आदि कई गुना बढ़ जाती है। जब घृत और शहद (मधु) का अन्य भेषज पदार्थों के साथ हवि रूप में प्रयोग होगा तो उन भेषज पदार्थों की भी शक्तियां बढ़ जायेगी। इस प्रकार थोड़ी सी भी आहुतियों से भेषज वायु की तेजस्विता तथा सैकड़ों प्रदूषणों को भली भूत करने की सामर्थ्य हो जाती है। वेद ने सहस्रभृष्टिः शत तेजा वायु रसि तिग्मतेजा द्विषतोवधः (यजुः १।२४) इन शब्दों द्वारा यह उपदिष्ट किया है।

मधु का शोधन कार्य

मधु शरीर में रोग दूर करने, रक्त का शोधन करने तथा शरीर की सूक्ष्म नाड़ियों में प्रविष्ट मल और अवरोध को बाहर निकालने का कार्य करता है। जब यही मधु यज्ञ में आहुति रूप से प्रयुक्त होता है तो यह अन्तरिक्ष में व्याप्त विविध स्थानों की वायु के मलों का भी शोधन करता है। अतः वायु प्रदूषण के निवारण के लिये मधु की अत्यन्त उपयोगिता है। मधु की उपयोगिता के साथ यज्ञ में मधुर पदार्थों की आवश्यकता रहती है। उनका भी लाभ मधु सदृश न्यूनाधिक होता है। मधुर पदार्थों में दाख (मुनक्का), किशमिश, छुहारा (खारक) गुड़, शक्कर आदि हैं। ये भी आहुति में प्रयुक्त करने से वायु प्रदूषण दूर करते हैं।

तृतीय भेषज द्रव्य सोमलतादि ओषधियां

ओषधि-वनस्पतियों में सोमलता सर्व अग्रणी है। वेद में सोम का बहुत उल्लेख है। सोम-सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, वृक्ष, वनस्पति, पर्वत, पृथिवी, वायु आदि सभी को बल देने वाला तथा पुष्ट करने वाला पदार्थ है। अथर्व वेद काण्ड १९, सूक्त १९ के मन्त्र ५ में लिखा है—सोम ओषधीभिरुदक्रामत्तां पुरं प्रणयामि वः। तामा विशत तां प्रविशत सा वः शर्म च वर्म च यच्छतु—अर्थात् सोम ओषधियों से उत्क्रमण करता है। उसे तुम सबके मध्य उपस्थित करता हूं। वह अच्छे प्रकार सर्वत्र व्याप्त होकर तुम सबकी सर्व प्रकार से रक्षा और संरक्षण करे। इससे स्पष्ट है कि ओषधियों से सोम की उत्क्रान्ति होती है। वह हमें जीवन देता है—हमारी रक्षा करता है। ओषधियों से सोम की उत्क्रान्ति जो प्रकृति में स्वाभाविक रूप से होती है—उसी को यज्ञ की प्रक्रिया से हमें यथेच्छ स्थानों में भी वायुप्रदूषण को नष्ट करने के लिये करना चाहिये जिससे सोम तत्व को आवश्यकतानुसार वायुमंडल में भर कर विश्व को जीवन प्रदान कर सकें।

सोमोत्पादक वनस्पतियों में गिलोय जिसे गुड़बेल गिलोय, गुडूची, गलो आदि नामों से व्यवहार करते हैं—वह प्रमुख है। इसका आयुर्वेद के ग्रन्थों में अमृता, सोमवल्ली रसायनी आदि नाम प्रसिद्ध है। परम जीवन देने वाली एवं रसायन भी यह है। अमृत को परम जीवनदायी, दिव्य तत्व माना गया है। इस गिलोय में सोम और अमृत दोनों के गुण विद्यमान हैं। अतः भेषज वायु के निर्माण में ओषधि द्रव्यों में यह सर्वश्रेष्ठ एवं मुख है। इसकी आहुति से अपूर्व लाभ होता है। निश्चय से यह वायु-प्रदूषण को छिन्न-भिन्न करने में अत्यन्त शक्तिशाली है। इसी प्रकार से अन्य ओषधियां जो वायुमण्डल की शोधक और प्राणप्रद हैं उनका भी भेषजवात के निर्माण कार्य एवं सोममण्डल निर्माण कार्य के लिये उपयोग लेना चाहिये जिनमें ब्राह्मी, वावची, नेगड़, बच, कूठ आदि विशेष उपयोगी हैं।

आहुति के लिये भेषज द्रव्यों का ज्ञान

किन ओषधि वनस्पतियों का उपयोग भेषजवात के निर्माण में करना चाहिये इसका सरल मार्ग अथर्ववेद के काण्ड ८ के सातवें सूक्त के २३ से २७ वें मन्त्र में यह बताया है कि जिन ओषधि-वनस्पतियों को गौ, भेड़, बकरी; हिरण, वराह, नेवला, सर्प पक्षी जानते हैं और सेवन करते हैं और विशेष रूप से खाते हैं तथा चिकित्सक जानते हैं उनकी आहुतियां यज्ञ में प्रयुक्त करने से अपने जीवन की रक्षा और विनाशक तत्व का विनाश होता है। अतः सर्वोपयोगी ओषधियों की भी आहुतियों से

(शेष पृष्ठ ४२ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—भारतेन्द्र नाथ

गृहस्थ कैसा हो ? विवाह कैसे हों ? गृहस्थाश्रम सर्वश्रेष्ठ और संसार का आधार है।

—जब यथावत् ब्रह्मचर्य में आचार्यानुकूल वर्तकर, धर्म से चारों, तीन वा दो अथवा एक वेद को साङ्गोपाङ्ग पढ़ के जिसका ब्रह्मचर्य खण्डित न हुआ हो, वह पुरुष वा स्त्री गृहाश्रम में प्रवेश करे।

—जो कन्या माता के कुल की छः पीढ़ियों में न हो और पिता के गोत्र की न हो, उस कन्या से विवाह करना उचित है।

—यह निश्चित बात है कि जैसी परोक्ष पदार्थ में प्रीति होती है वैसी प्रत्यक्ष में नहीं। जैसे किसी ने मिश्री के गुण सुने हों और खाई न हो तो उसका मन उसी में लगा रहता है। जैसे किसी परोक्ष वस्तु की प्रशंसा सुनकर मिलने की उत्कट इच्छा होती है वैसे ही दूरस्थ अर्थात् जो अपने गोत्र वा माता के कुल में निकट सम्बन्ध की न हो उसी कन्या से वर का विवाह होना चाहिए।

—जैसे पानी में पानी मिलने से विलक्षण गुण नहीं होता वैसे एक गोत्र पितृ वा मातृकुल में विवाह होने में धातुओं कि अदल बदल नहीं होने से उन्नति नहीं होती।

—कन्या का नाम दुहिता इस कारण से है कि इसका विवाह दूर देश में होने से हितकारी होता है निकट रहने में नहीं।

—पिता के एक गोत्र, माता की छः पीढ़ी और समीप देश में विवाह करना अच्छा नहीं।

—जो कुल सत्क्रिया से हीन, सत्पुरुषों से रहित, वेदाध्ययन से विमुख, शरीर पर बड़े-बड़े लोम अथवा बवासीर, क्षयी, दमा, खांसी, आमाशय, मिरगी, श्वेतकुष्ठ और गलितकुष्ठयुक्त कुलों की कन्या वा वर के साथ विवाह होना न चाहिए।

—सोलहवें वर्ष से लेके चौबीसवें वर्ष तक कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेके अड़तालीसवें वर्ष तक पुरुष का विवाह-समय उत्तम है। जो सोलह और पच्चीस में विवाह करे तो निकृष्ट, अठारह बीस की स्त्री तीस पैंतीस वा चालीस वर्ष के पुरुष का मध्यम, चौबीस वर्ष की स्त्री और अड़तालीस वर्ष के पुरुष और कन्या का विवाह होना उत्तम है।

—ब्रह्मचर्य विद्या के ग्रहणपूर्वक विवाह के सुधार ही से सब बातों का सुधार और बिगड़ने से बिगाड़ हो जाता है।

—चाहे लड़का लड़की मरणपर्यन्त कुमारे रहें परन्तु असदृश अर्थात् परस्पर विरुद्ध गुण कर्म स्वभाववालों का विवाह कभी न होना चाहिए।

—लड़का लड़की के अधीन विवाह होना उत्तम है। जो माता-पिता विवाह करना कभी विचारें तो भी लड़का लड़की की प्रसन्नता के बिना न होना चाहिए क्योंकि एक दूसरे की प्रसन्नता से विवाह होने में विरोध बहुत कम होता और सन्तान उत्तम होते हैं। अप्रसन्नता के विवाह में नित्य क्लेश ही रहता है। विवाह में मुख्य प्रयोजन वर और कन्या का है माता पिता का नहीं, क्योंकि जो उसमें परस्पर प्रसन्नता रहे तो उन्हीं को सुख और विरोध में उन्हीं को दुःख होता है।

—जिस कुल में स्त्री से पुरुष और पुरुष से स्त्री सदा प्रसन्न रहती है उसी कुल में आनन्द लक्ष्मी और कीर्ति निवास करती है और जहां विरोध, कलह होता है वहां दुःख, दरिद्रता और निन्दा निवास करती है।

—जब स्त्री पुरुष विवाह करना चाहें तब विद्या, विनय, शील, रूप, आयु, बल, कुल, शरीर का परिमाणादि यथायोग्य होना चाहिए। जब तक इनका मेल नहीं होता तब तक विवाह में कुछ भी सुख नहीं होता और न बाल्यावस्था में विवाह करने से सुख होता है।

—जब तक इसी प्रकार सब ऋषि-मुनि, राजा-महाराजा आर्य लोग ब्रह्मचर्य से विद्या पढ़ ही के स्वयंवर विवाह करते थे तब तक इस देश की सदा उन्नति होती थी। जब से यह ब्रह्मचर्य से विद्या का न पढ़ना, बाल्यावस्था में पराधीन अर्थात् माता-पिता के अधीन विवाह होने लगा तब से क्रमशः आर्यावर्त्त देश की हानि होती चली आई है। इससे इस दुष्ट काम को छोड़के सज्जन लोग पूर्वोक्त प्रकार से स्वयंवर विवाह करें।

—जब परमेश्वर के निराकार होने से मुखादि अङ्ग ही नहीं हैं तो मुख से उत्पन्न होना असम्भव है जैसा कि वन्ध्या स्त्री आदि के पुत्र का विवाह होना !

—ब्राह्मण के पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना कराना, दान देना, लेना, ये छः कर्म हैं।

—जल से बाहर के अंग, सत्याचार से मन, विद्या और धर्मानुष्ठान से जीवात्मा और ज्ञान से बुद्धि पवित्र होती है।

—शूद्र को योग्य है कि निन्दा, ईर्ष्या, अभिमान आदि दोषों को छोड़कर ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की सेवा यथावत् करना और उसी से अपना जीवन निर्वाह करना यही एक शूद्र का गुण कर्म है।

—जिस-जिस पुरुष में जिस-जिस वर्ण के गुण कर्म हों उस-उस वर्ण का अधिकार देना, ऐसी व्यवस्था रखने से सब मनुष्य उन्नतिशील होते हैं। क्योंकि उत्तम वर्णों को

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

भय होगा कि जो हमारे सन्तान मूर्खत्वादि दोषयुक्त होंगे तो शूद्र हो जायेंगे और सन्तान भी डरते रहेंगे कि जो उक्त चाल चलन और विद्यायुक्त न होंगे तो शूद्र होना पड़ेगा। और नीच वर्णों को उत्तम वर्णस्थ होने के लिए उत्साह बढ़ेगा।

—विद्या और धर्म के प्रचार का अधिकार ब्राह्मण को देना क्योंकि वे पूर्ण विद्यावान् और धार्मिक होने से उस काम को यथायोग्य कर सकते हैं।

—क्षत्रियों को राज्य के अधिकार से कभी राज्य की हानि वा विघ्न नहीं होता।

—पशुपालनादि का अधिकार वैश्यों ही को होना योग्य है क्यों कि वे इस काम को अच्छे प्रकार कर सकते हैं।

—शूद्र को सेवा का अधिकार इसलिए है कि वह विद्यारहित मूर्ख होने से विज्ञानसम्बन्धी काम कुछ भी नहीं कर सकता। किन्तु शरीर के काम सब कर सकता है।

—इस प्रकार वर्णों को अपने-अपने अधिकार में प्रवृत्त करना राजा आदि सभ्यजनों का काम है।

—विवाह आठ प्रकार का होता है। एक ब्राह्म, दूसरा दैव, तीसरा आर्ष, चौथा प्राजापत्य, पांचवां आसुर, छठा गान्धर्व सातवां राक्षस, आठवां पैशाच।

—जब कन्या वा वर के विवाह का समय हो अर्थात् जब एक वर्ष वा छः महीने ब्रह्मचर्याश्रम और विद्या पूरी होने में शेष रहें तब उन कन्या और कुमारों का प्रतिबिम्ब अर्थात् जिसको "फोटोग्राफ" कहते हैं अथवा प्रतिकृति उतार के कन्याओं की अध्यापिकाओं के पास कुमारों की, कुमारों के अध्यापक के पास कन्याओं की प्रतिकृति भेज देवें, जिस जिस का रूप मिल जाय उस उसके इतिहास अर्थात् जन्म से लेके उस दिन पर्यन्त जन्मचरित्र का पुस्तक हो उसको अध्यापक लोग मंगवा के देखें जब दोनों के गुण कर्म स्वभाव सदृश हों तब जिस जिसके साथ जिस जिसका विवाह होना योग्य समझें उस उस पुरुष और कन्या का प्रतिबिम्ब और इतिहास कन्या और वर के हाथ में देवें और कहें कि इसमें जो तुम्हारा अभिप्राय हो सो हमको विदित कर देना। जब उन दोनों का निश्चय परस्पर विवाह करने का हो जाय तब उन दोनों का समावर्त्तन एक ही समय में होवे। जो वे दोनों अध्यापकों के सामने विवाह करना चाहें तो वहां, नहीं तो कन्या के माता-पिता के घर में विवाह होना योग्य है। जब वे सम्मुख हों तब उन अध्यापकों वा कन्या के माता-पिता आदि भद्रपुरुषों के सामने उन दोनों की आपस में बातचीत, शास्त्रार्थ कराना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछें सो भी कागज में लिखके एक-दूसरे के हाथ में देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें।

—उन दोनों का दृढ़ प्रेम विवाह करने में हो जाय तब से उनके खान-पान का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिए।

—जो अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है वह गृहस्थ भी ब्रह्मचारी सदृश है।

—सत्पुरुषों को योग्य है कि मुख के सामने दूसरे का दोष कहना और अपना दोष सुनना, परोक्ष में दूसरे के गुण सदा कहना। दुष्टों की यही रीति है कि सम्मुख में गुण कहना और परोक्ष में दोषों का प्रकाश करना।

—जब तक मनुष्य दूसरे से अपने दोष नहीं कहता तब तक मनुष्य दोषों से छूटकर गुणी नहीं हो सकता।

—कभी किसी की निन्दा न करे।

—जो गुणों में दोष दोषों में गुण लगाना वह 'निन्दा' और गुणों में गुण दोषों में दोषों का कथन करना 'स्तुति' कहाती है अर्थात् मिथ्याभाषण का नाम 'निन्दा' और सत्यभाषण का नाम 'स्तुति' है।

—जिस-जिस कर्म से तृप्त अर्थात् विद्यमान माता-पितादि पितर प्रसन्न हों और प्रसन्न किये जायें उसका नाम तर्पण है, परन्तु यह जीवितों के लिए है, मृतकों के लिए नहीं।

—जो विद्वान् हैं उन्हीं को देव कहते हैं।

—अतिथि उसको कहते हैं कि जिसकी कोई तिथि निश्चित न हो अर्थात् अकस्मात् धार्मिक, सत्योपदेशक, सब के उपकारार्थ सर्वत्र घूमने वाला पूर्ण विद्वान्, परमयोगी, संन्यासी, गृहस्थ के यहां आवे तो उसको प्रथम पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय तीन प्रकार का जल देकर पश्चात् आसन पर सत्कारपूर्वक बिठलाकर खान-पान आदि उत्तमोत्तम पदार्थों से सेवा शुश्रूषा करके प्रसन्न करे।

—किया हुआ अधर्म निष्फल कभी नहीं होता परन्तु जिस समय अधर्म करता है उसी समय फल भी नहीं होता इसलिये अज्ञानी लोग अधर्म से नहीं डरते। तथापि निश्चय जानो कि वह अधर्माचरण धीरे-धीरे तुम्हारे सुख के मूलों को काटता चला जाता है।

—परन्तु जो एक-दूसरे के आधीन काम है वह-वह आधीनता से ही करना चाहिये जैसा कि स्त्री और पुरुष का एक-दूसरे के आधीन व्यवहार अर्थात् स्त्री पुरुष का और पुरुष स्त्री का परस्पर प्रियाचरण, अनुकूल रहना, व्यभिचार या विरोध कभी न करना। पुरुष की आज्ञानुकूल घर के काम स्त्री और बाहर के काम पुरुष के आधीन रहना। दुष्ट व्यसन में फँसने से एक दूसरे को रोकना अर्थात् यही निश्चय जानना कि जब विवाह होवे तब स्त्री के साथ पुरुष और पुरुष के साथ स्त्री बिक चुकी अर्थात् जो स्त्री और पुरुष के साथ हाव, भाव, नखशिखाग्रपर्यन्त जो कुछ है वह वीर्यादि एक दूसरे के आधीन हो जाता है। स्त्री या पुरुष प्रसन्नता के बिना कोई भी व्यवहार न करें। इनसे बड़े अप्रियकारक व्यभिचार, वेश्या-परपुरुषगमनादि काम हैं। इनको छोड़के अपने पति के साथ स्त्री और स्त्री के साथ पति सदा प्रसन्न रहें।

—स्त्री और पुरुष का वियोग कभी न होना चाहिये।

—दूर देश में यात्रार्थ जावे तो स्त्री को भी साथ रक्खे।

—चाहे किसी का वचन हो परन्तु वेदविरुद्ध होने से नहीं मानते।

गृहस्थ महिमा

—जैसे नदी और बड़े-बड़े नद तब तक भ्रमते ही रहते हैं जब तक समुद्र को प्राप्त नहीं होते, वैसे गृहस्थ ही के

(शेष पृष्ठ ४१ पर)

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज मल्लावां (हरदोई) में शताब्दी समारोह

मल्लावां (हरदोई) ६ मई। मल्लावां आर्य समाज की ओर से क्षेत्रीय आर्य समाज स्थापना शताब्दी महोत्सव ७-८-६ मई को धूमधाम से मनाया गया।

इस अवसर पर ६ व्यक्तियों के मुसलमान परिवार का शुद्धि समारोह देखने आस-पास की पौराणिक जनता भारी संख्या में उमड़ पड़ी। शुद्धि यज्ञ आचार्य पं० बिहारीलाल शास्त्री शास्त्रार्थ महारथी ने सम्पन्न कराया। पं० शिवदेव शास्त्री महोपदेशक यज्ञ वेदी पर विराजमान थे।

शताब्दी समारोह में भाषण देते हुए दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्र नाथ ने कहा कि अगर १८७५ में महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज स्थापित न किया होता तो आज राम कृष्ण का नाम लेने वाला भी भारत में दिखाई न पड़ता।

आप ने समस्त देशवासियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि अब समय आ गया है जब हम समस्त जाति-मत वाद के भ्रमों से ऊपर उठकर 'ओ३म्' के झंडे के नीचे आएं और राष्ट्र को शुद्ध बनाएं। समारोह में सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री रामगोपाल शालवाले और उत्तर-प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के उप प्रधान पं० सच्चिदानन्द शास्त्री ने भी भाग लिया। अनेक वर्षों के पश्चात् इस क्षत्र की जनता ने धर्म का सच्चा संदेश सुनकर आनन्द और शान्ति का अनुभव किया।

आर्य समाज बदोर कोरांव (प्रयाग) का चुनाव

श्री संगमलाल प्रधान
जंगीरमल सिंह मन्त्री
रामासरे सिंह उपमंत्री
शिवचन्द्र सिंह कोषाध्यक्ष

कीर्ति स्तंभ हेतु सहयोग दें

गुजरात राज्य में नासिक से २० मील दूर डांग प्रदेश की पर्वतमाला में गुजरात का एक मात्र हिल स्टेशन बना है जहां सरकारी आयोजन से श्रेष्ठि वर्ग के बंगले बन रहे हैं और कई धार्मिक, सामाजिक और शैक्षणिक संस्थायें खड़ी की जा रही हैं। जैन समाज ने एक सारी पहाड़ी प्राप्त की है जिस पर एक करोड़ रुपया लगाकर जैन मन्दिर एवं जैन कालोनी का निर्माण कर रहे हैं।

हमें भी गुजरात सरकार की ओर से दो एकड़ भूमि आर्य समाज मन्दिर, यज्ञशाला और स्कूल निर्माण हेतु प्राप्त हुई है। हम शीघ्र ही वहां समाज मन्दिर एवं यज्ञशाला का सम्मिलित रूपेण रु० दो लाख लगाकर यह कार्य आरम्भ करना चाहते हैं। आर्य समाज का यह शताब्दी वर्ष है और इसी वर्ष हम इस कार्य की पूर्ति कर देना चाहते हैं।

संस्था अपनी ओर से इस कार्य हेतु ५० हजार रुपया लगायेगी और बाकी डेढ़ लाख रुपया पन्द्रह सौ आर्य भाइयों से एकत्र करना चाहते हैं जो महर्षि की भूमि गुजरात में मात्र सौ रुपया प्रदान करके इस नए हिल स्टेशन पर महर्षि दयानन्द का कीर्ति स्तम्भ खड़ा करने में हमें सहायभूत हों।

आर्य कुमार महासभा के पास कर मुक्ति सर्टिफिकेट है।

भवदीय
—आनन्द प्रिय
मंत्री आर्यकुमार महासभा
करेली बाग, बड़ौदा

आर्य समाज कृष्णनगर भिवानी का १३वाँ वार्षिकोत्सव

आर्य समाज कृष्ण नगर भिवानी का वार्षिकोत्सव दिनांक २१, २२, २३ मई, ज्येष्ठ, कृष्णा ८·४·१० बार शुक्ल शनि तथा रवि को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सुप्रबन्ध में बड़े समारोह पूर्वक मनाया गया है।

—आर्य जगत से सुविख्यात विद्वान महात्मा नारायण स्वामी जी क्रान्तिकारी, श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज, प्रधान आर्य युवक परिषद पंजाब, तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान उपदेशक एवं भजनीकों पधार कर तीन दिन तक ज्ञान की गंगा बहायी।

आय समाज अमौली का महोत्सव

आ० स० अमोली फतेहपुर (उ० प्र०) का वार्षिक उत्सव अत्यन्त समारोह के साथ २९ अप्रैल से २ मई तक मनाया गया। उत्सव में ३० अप्रैल को राज्य मन्त्री श्री कुलतार सिंह का आगमन हुआ। उन्होंने सरदार भगतसिंह की जीवनी पर विशेष प्रकाश डालते हुए पंजाब की आर्य-सामाजिक क्रान्ति एवं वर्तमान समस्याओं पर व्याख्यान दिया।

दो मई को आ० प्र० सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान पं० विद्याधर जी का आगमन, कानपुर के दो संभ्रान्त विद्वानों, श्री लक्ष्मण कुमार शास्त्री एवं श्री विजयपाल शास्त्री के साथ हुआ। सभा प्रधान जी के साथ श्रीमती सुमन जी प्रधानाचार्या, श्रीमती शशि कान्ता जी मन्त्राणी स्त्री आर्य समाज शीशामऊ (कानपुर) एवं श्रीमती सरला चौधरी भी पधारीं। उक्त महिलाओं ने महिला सम्मेलन में क्षेत्रीय महिलाओं से कुरीतियों एवं भ्रष्टाचार पूर्ण अन्धविश्वासों को दूर करने की अपील की और समयानुकूल उचित धार्मिक एवं सामाजिक मार्ग निर्देशन भी दिया। सभा प्रधान पण्डित विद्याधर जी को १०१ रु० की धन-राशि वेद प्रचारार्थ समर्पित की गई।

६ जून का अंक प्रकाशित नहीं होगा

रोहतक शताब्दी समारोह में व्यस्त रहने के कारण जन-ज्ञान साप्ताहिक का ६ जून का अंक नहीं छपेगा। कृपया सभी अंकित कर लें—

—व्यवस्थापक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भय होगा कि जो हमारे सन्तान मूर्खत्वादि दोषयुक्त होंगे तो शूद्र हो जायेंगे और सन्तान भी डरते रहेंगे कि जो उक्त चाल चलन और विद्यायुक्त न होंगे तो शूद्र होना पड़ेगा। और नीच वर्णों को उत्तम वर्णस्थ होने के लिए उत्साह बढ़ेगा।

—विद्या और धर्म के प्रचार का अधिकार ब्राह्मण को देना क्योंकि वे पूर्ण विद्यावान् और धार्मिक होने से उस काम को यथायोग्य कर सकते हैं।

—क्षत्रियों को राज्य के अधिकार से कभी राज्य की हानि वा विघ्न नहीं होता।

—पशुपालनादि का अधिकार वैश्यों ही को होना योग्य है क्यों कि वे इस काम को अच्छे प्रकार कर सकते हैं।

—शूद्र को सेवा का अधिकार इसलिए है कि वह विद्यारहित मूर्ख होने से विज्ञानसम्बन्धी काम कुछ भी नहीं कर सकता। किन्तु शरीर के काम सब कर सकता है।

—इस प्रकार वर्णों को अपने-अपने अधिकार में प्रवृत्त करना राजा आदि सभ्यजनों का काम है।

—विवाह आठ प्रकार का होता है। एक ब्राह्म, दूसरा दैव, तीसरा आर्ष, चौथा प्राजापत्य, पांचवां आसुर, छठा गान्धर्व सातवां राक्षस, आठवां पैशाच।

—जब कन्या वा वर के विवाह का समय हो अर्थात् जब एक वर्ष वा छः महीने ब्रह्मचर्याश्रम और विद्या पूरी होने में शेष रहें तब उन कन्या और कुमारों का प्रतिबिम्ब अर्थात् जिसको "फोटोग्राफ" कहते हैं अथवा प्रतिकृति उतार के कन्याओं की अध्यापिकाओं के पास कुमारों की, कुमारों के अध्यापक के पास कन्याओं की प्रतिकृति भेज देवें, जिस जिस का रूप मिल जाय उस उसके इतिहास अर्थात् जन्म से लेके उस दिन पर्यन्त जन्मचरित्र का पुस्तक हो उसको अध्यापक लोग मंगवा के देखें जब दोनों के गुण कर्म स्वभाव सदृश हों तब जिस जिसके साथ जिस जिसका विवाह होना योग्य समझें उस उस पुरुष और कन्या का प्रतिबिम्ब और इतिहास कन्या और वर के हाथ में देवें और कहें कि इसमें जो तुम्हारा अभिप्राय हो सो हमको विदित कर देना। जब उन दोनों का निश्चय परस्पर विवाह करने का हो जाय तब उन दोनों का समावर्तन एक ही समय में होवे। जो वे दोनों अध्यापकों के सामने विवाह करना चाहें तो वहां, नहीं तो कन्या के माता-पिता के घर में विवाह होना योग्य है। जब वे समक्ष हों तब उन अध्यापकों वा कन्या के माता-पिता आदि भद्रपुरुषों के सामने उन दोनों की आपस में बातचीत, शास्त्रार्थ कराना और जो कुछ गुप्त व्यवहार पूछें सो भी सभा में लिखके एक-दूसरे के हाथ में देकर प्रश्नोत्तर कर लेवें।

—उन दोनों का दृढ़ प्रेम विवाह करने में हो जाय तब से उनके खान-पान का उत्तम प्रबन्ध होना चाहिए।

—जो अपनी ही स्त्री से प्रसन्न और ऋतुगामी होता है वह गृहस्थ भी ब्रह्मचारी सदृश है।

—सत्पुरुषों को योग्य है कि मुख के सामने दूसरे का दोष कहना और अपना दोष सुनना, परोक्ष में दूसरे के गुण सदा कहना। दुष्टों की यही रीति है कि सम्मुख में गुण कहना और परोक्ष में दोषों का प्रकाश करना।

—जब तक मनुष्य दूसरे से अपने दोष नहीं कहता तब तक मनुष्य दोषों से छूटकर गुणी नहीं हो सकता।

—कभी किसी की निन्दा न करे।

—जो गुणों में दोष दोषों में गुण लगाना वह 'निन्दा' और गुणों में गुण दोषों में दोषों का कथन करना 'स्तुति' कहाती है अर्थात् मिथ्याभाषण का नाम 'निन्दा' और सत्यभाषण का नाम 'स्तुति' है।

—जिस-जिस कर्म से तृप्त अर्थात् विद्यमान माता-पितादि पितर प्रसन्न हों और प्रसन्न किये जायें उसका नाम तर्पण है, परन्तु यह जीवितों के लिए है, मृतकों के लिए नहीं।

—जो विद्वान् हैं उन्हीं को देव कहते हैं।

—अतिथि उसको कहते हैं कि जिसकी कोई तिथि निश्चित न हो अर्थात् अकस्मात् धार्मिक, सत्योपदेशक, सब के उपकारार्थ सर्वत्र घूमने वाला पूर्ण विद्वान्, परमयोगी, संन्यासी, गृहस्थ के यहां आवे तो उसको प्रथम पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय तीन प्रकार का जल देकर पश्चात् आसन पर सत्कारपूर्वक बिठलाकर खान-पान आदि उत्तमोत्तम पदार्थों से सेवा शुश्रूषा करके प्रसन्न करे।

—किया हुआ अधर्म निष्फल कभी नहीं होता परन्तु जिस समय अधर्म करता है उसी समय फल भी नहीं होता इसलिये अज्ञानी लोग अधर्म से नहीं डरते। तथापि निश्चय जानो कि वह अधर्माचरण धीरे-धीरे तुम्हारे सुख के मूलों को काटता चला जाता है।

—परन्तु जो एक-दूसरे के आधीन काम है वह-वह आधीनता से ही करना चाहिये जैसा कि स्त्री और पुरुष का एक-दूसरे के आधीन व्यवहार अर्थात् स्त्री पुरुष का और पुरुष स्त्री का परस्पर प्रियाचरण, अनुकूल रहना, व्यभिचार वा विरोध कभी न करना। पुरुष की आज्ञानुकूल घर के काम स्त्री और बाहर के काम पुरुष के आधीन रहना। दुष्ट व्यसन में फंसने से एक दूसरे को रोकना अर्थात् यही निश्चय जानना कि जब विवाह होवे तब स्त्री के साथ पुरुष और पुरुष के साथ स्त्री बिक चुकी अर्थात् जो स्त्री और पुरुष के साथ हाव, भाव, नखशिखाग्रपर्यन्त जो कुछ है वह वीर्यादि एक दूसरे के आधीन हो जाता है। स्त्री वा पुरुष प्रसन्नता के विना कोई भी व्यवहार न करें। इनसे बड़े अप्रियकारक व्यभिचार, वेश्या-परपुरुषगमनादि काम हैं। इनको छोड़के अपने पति के साथ स्त्री और स्त्री के साथ पति सदा प्रसन्न रहें।

—स्त्री और पुरुष का वियोग कभी न होना चाहिये।

—देर देश में यात्रार्थ जावे तो स्त्री को भी साथ रक्खे।

—चाहे किसी का वचन हो परन्तु वेदविरुद्ध होने से नहीं मानते।

गृहस्थ महिमा

—जैसे नदी और बड़े-बड़े नद तब तक भ्रमते ही रहते हैं जब तक समुद्र को प्राप्त नहीं होते, वसे गृहस्थ ही के

(शेष पृष्ठ ४३ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज मल्लावां (हरदोई) में शताब्दी समारोह

मल्लावां (हरदोई) ६ मई। मल्लावां आर्य समाज की ओर से क्षेत्रीय आर्य समाज स्थापना शताब्दी महोत्सव ७-८-९ मई को धूमधाम से मनाया गया।

इस अवसर पर ६ व्यक्तियों के मुसलमान परिवार का शुद्धि समारोह देखने आस-पास की पौराणिक जनता भारी संख्या में उमड़ पड़ी। शुद्धि यज्ञ आचार्य पं० बिहारीलाल शास्त्री शास्त्रार्थ महारथी ने सम्पन्न कराया। पं० शिवदेव शास्त्री महोपदेशक यज्ञ वेदी पर विराजमान थे।

शताब्दी समारोह में भाषण देते हुए दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्र नाथ ने कहा कि अगर १८७५ में महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज स्थापित न किया होता तो आज राम कृष्ण का नाम लेने वाला भी भारत में दिखाई न पड़ता।

आप ने समस्त देशवासियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि अब समय आ गया है जब हम समस्त जाति-मत वाद के भ्रमों से ऊपर उठकर 'ओ३म्' के झंडे के नीचे आएं और राष्ट्र को शुद्ध बनाएं। समारोह में सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री रामगोपाल शालवाले और उत्तरप्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के उप प्रधान पं० सच्चिदानन्द शास्त्री ने भी भाग लिया। अनेक वर्षों के पश्चात् इस क्षत्र की जनता ने धर्म का सच्चा संदेश सुनकर आनन्द और शान्ति का अनुभव किया।

आर्य समाज बदोर फोरांव (प्रयाग) का चुनाव

श्री संगमलाल प्रधान
जंगीरमल सिंह मन्त्री
रामासरे सिंह उपमंत्री
शिवचन्द्र सिंह कोषाध्यक्ष

कीर्ति स्तंभ हेतु सहयोग दें

गुजरात राज्य में नासिक से २० मील दूर डांग प्रदेश की पर्वतमाला में गुजरात का एक मात्र हिल स्टेशन बना है जहां सरकारी आयोजन से श्रेष्ठि वर्ग के बंगले बन रहे हैं और कई धार्मिक, सामाजिक और शैक्षणिक संस्थायें खड़ी की जा रही हैं। जैन समाज ने एक सारी पहाड़ी प्राप्त की है जिस पर एक करोड़ रुपया लगाकर जैन मन्दिर एवं जैन कालोनी का निर्माण कर रहे हैं।

हमें भी गुजरात सरकार की ओर से दो एकड़ भूमि आर्य समाज मन्दिर, यज्ञशाला और स्कूल निर्माण हेतु प्राप्त हुई है। हम शीघ्र ही वहां समाज मन्दिर एवं यज्ञशाला का सम्मिलित रूपेण रु० दो लाख लगाकर यह कार्य आरम्भ करना चाहते हैं। आर्य समाज का यह शताब्दी वर्ष है और इसी वर्ष हम इस कार्य की पूर्ति कर देना चाहते हैं।

संस्था अपनी ओर से इस कार्य हेतु ५० हजार रुपया लगायेगी और बाकी डेढ़ लाख रुपया पन्द्रह सौ आर्य भाइयों से एकत्र करना चाहते हैं जो महर्षि की भूमि गुजरात में मात्र सौ रुपया प्रदान करके इस नए हिल स्टेशन पर महर्षि दयानन्द का कीर्ति स्तम्भ खड़ा करने में हमें सहायभूत हों।

आर्य कुमार महासभा के पास कर मुक्ति सर्टिफिकेट है।

भवदीय
—आनन्द प्रिय
मंत्री आर्यकुमार महासभा
करेली बाग, बड़ोदा

आर्य समाज कृष्णनगर भिवानी का १३वाँ वार्षिकोत्सव

आर्य समाज कृष्ण नगर भिवानी का वार्षिकोत्सव दिनांक २१, २२, २३ मई, ज्येष्ठ, कृष्णा ८·४·१० वार शुक्र शनि तथा रवि को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के सुप्रबन्ध में बड़े समारोह पूर्वक मनाया गया है।

—आर्य जगत से सुविख्यात विद्वान महात्मा नारायण स्वामी जी क्रान्तिकारी, श्री स्वामी वेदानन्द जी महाराज, प्रधान आर्य युवक परिषद पंजाब, तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रसिद्ध विद्वान उपदेशक एवं भजनीकों पधार कर तीन दिन तक ज्ञान की गंगा बहायी।

आर्य समाज अमौली का महोत्सव

आ० स० अमौली फतेहपुर (उ० प्र०) का वार्षिक उत्सव अत्यन्त समारोह के साथ २९ अप्रैल से २ मई तक मनाया गया। उत्सव में ३० अप्रैल को राज्य मन्त्री श्री कुलतार सिंह का आगमन हुआ। उन्होंने सरदार भगतसिंह की जीवनी पर विशेष प्रकाश डालते हुए पंजाब की आर्य-सामाजिक क्रान्ति एवं वर्तमान समस्याओं पर व्याख्यान दिया।

दो मई को आ० प्र० सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान पं० विद्याधर जी का आगमन, कानपुर के दो संभ्रान्त विद्वानों, श्री लक्ष्मण कुमार शास्त्री एवं श्री विजयपाल शास्त्री के साथ हुआ। सभा प्रधान जी के साथ श्रीमती सुमन जी प्रधानाचार्या, श्रीमती शशि कान्ता जी मन्त्राणी स्त्री आर्य समाज शीशामऊ (कानपुर) एवं श्रीमती सरला चौधरी भी पधारीं। उक्त महिलाओं ने महिला सम्मेलन में क्षेत्रीय महिलाओं से कुरीतियों एवं भ्रष्टाचार पूर्ण अन्धविश्वासों को दूर करने की अपील की और समयानुकूल उचित धार्मिक एवं सामाजिक मार्ग निर्देशन भी दिया। सभा प्रधान पण्डित विद्याधर जी को १०१ रु० की धनराशि वेद प्रचारार्थ समर्पित की गई।

६ जून का अंक प्रकाशित नहीं होगा

रोहतक शताब्दी समारोह में व्यस्त रहने के कारण जन-ज्ञान साप्ताहिक का ६ जून का अंक नहीं छपेगा। कृपया सभी अंकित कर लें—

—व्यवस्थापक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—आनन्द

सच्ची शान्ति का मार्ग

प्राचीन काल की बात है। एक राजा था। उसे ईश्वर पर पूर्ण भरोसा था। विद्वानों से त्याग की महिमा सुनकर उसने राज-पाट त्याग दिया और तप करने का निश्चय कर लिया। रानी ने बहुत समझाया-बुझाया किन्तु वह अपने निश्चय पर अटल रहकर हिमालय पर्वत में तप करने चला गया और वहीं एक कुटी बनाकर रहने लगा। एक वर्ष तक उसने बड़े त्याग और संयम से जीवन बिताया किन्तु उसे शान्ति न मिल सकी।

इधर राजा के चले जाने के बाद राज्य में भाँति-भाँति के उपद्रव होने लगे। रानी ने जैसे भी हो राजा को लौटाने का निश्चय कर हिमालय की राह ली और संन्यासिनी के भेष में राजा के पास पहुँची। उसने राजा को उसकी कुटी में ध्यान मग्न पाया। जब राजा की आँखें खुलीं तो उसने अपने सामने रानी को हाथ में त्रिशूल लिए हुए देखा और उसे कोई सिद्ध संन्यासिनी समझा। राजा ने उसे न पहचानते हुए प्रणाम किया और बोला—'देवि! मैं समझता हूँ कि आप मुझे मुक्ति दिलाने आई हैं।'

रानी बोली—'हाँ, मैं तुम्हें मुक्ति दिलाने ही आई हूँ। तुम्हें भ्रम के अन्धकार से मुक्ति दिलाने आई हूँ। बोलो, तुम क्या चाहते हो?'

राजा बोला—'देवि! मैं जीवन में पूर्ण शान्ति का इच्छुक हूँ।'

रानी—'यह तो पूर्ण त्याग से ही सम्भव है।'

राजा ने कहा—'मैं तो सर्वस्व त्यागकर ही यहाँ आया हूँ। फिर भी मेरा चित्त शांत नहीं।'

रानी—'तुमने तो कुछ भी नहीं त्यागा है।'

राजा—'देवि, मैंने तो राज-पाट, महलों का वैभव और घर-परिवार स्त्री सभी कुछ छोड़ दिया है। मैं तो पूर्ण वैरागी हूँ।'

रानी—'क्या तुम्हारे अधिकार में कुछ भी नहीं।'

राजा—'बस, यही कुटी तथा कमण्डल एवं दण्ड है।'

रानी—'फिर तुम तो पूर्ण त्यागी नहीं हो। जब तक तुम्हारे मन में ममता है, तब तक ये तुम्हें बांधे हुए हैं।'

राजा ने तनिक विचार किया तो उसे लगा कि सचमुच स्थिति ऐसी ही है। वह उठा और उसने कुटिया को आग लगा दी तथा कमण्डल भी फेंक दिया और फिर वह बोला—'अच्छा, अब तो हो गया न मैं पूर्ण त्यागी?'

रानी मुस्कराई और बोली—'अभी कहाँ! अभी तो तुमने धरती के कुछ भाग पर कब्जा किया हुआ है। जब तक तुम इस धरती पर बैठे हुए हो इस पर तुम्हारा अधिकार है। सच्चा त्यागी तो वही है जो विश्व की किसी वस्तु पर भी अवलम्बित न रहे। तुम तो धरती के छोटे से टुकड़े के ऋणी हो। इसका भी त्याग कर दो।'

राजा पर इन शब्दों का बड़ा प्रभाव पड़ा। अतएव उसने आत्मदाह कर संसार ऋण से मुक्ति पाने का निश्चय कर लिया। उसकी दृष्टि में ऐसा करना ही पूर्ण त्याग था। उसने शीघ्र ही चिता बनाई और जलने का तैयार हो गया। अभी वह ऐसा करने को ही था कि रानी बोली 'संन्यासी ठहरो! तुम क्या करना चाहते हो?'

राजा ने कहा—'मैं आत्मदाह कर धरती को अपने भार से मुक्त करना चाहता हूँ।'

रानी—'तो क्या शरीर के जल जाने पर कुछ भी नहीं बचेगा?'

राजा—'शेष तो केवल राख ही रहेगी।'

रानी—'वह राख किसकी होगी?'

राजा ने उत्तर दिया 'मेरी।'

रानी—'फिर भी राख तो तुम्हारी ही होगी।

वह तो धरती के एक भाग को घेरे ही रहेगी। इस कारण ऐसा करने पर भी तुम सर्वस्व त्यागी कैसे कहे जाओगे?'

राजा उलझन में पड़ गया और बोला—'सर्वेश्वरी, तो आप ही बताइए कि मैं कैसे सर्वस्व त्यागी बन सकता हूँ।'

रानी—'तुम स्वयं को दूसरों की सेवा में लगा दो। उनके सुख-दुःख को अपना समझो तथा हर्ष एवं शोक को भुला दो। सभी उस प्रभु के विराट् शरीर के अंग हैं, यह मानकर चलोगे तो तुम्हें सच्ची शांति प्राप्त हो सकेगी।'

राजा—'देवि! मेरा भ्रम दूर हो गया।

रानी—'यदि ऐसा है तो फिर चाहें तुम हिमालय में रहो या महल में एक ही जैसे रहोगे। तुम इस बात को स्वीकार करते हो न? अतएव तुम घर पर रहकर भी तो शांति पा सकते थे। तुम घर से डर कर ही यहाँ आए हो।'

राजा—'मैं तो एकांत सेवन से शान्ति पाना चाहता था।'

रानी—'यही कायरता है। वीरता इसमें है कि मनुष्य जहाँ भी रहे वहीं रहते हुए आत्मिक शान्ति पाए। शांति बाहर खोजने से नहीं मिलेगी वह तो अन्तस्थल के भीतर मिलती है।

राजा—'तो मुझे क्या करना होगा?'

रानी—'तुम अपने मन को दृढ़ करो। समाज में आओ, दूसरों की सेवा करो। अपने जीवन को दूसरों के लिए उपयोगी बनाओ। संसार के कीचड़ में रहकर भी कमल के समान निर्लिप्त बनकर ऊपर उठो। तुम देखोगे कि तुम्हें अनन्त प्रकाश मिलेगा। वस्तुतः दूसरों के कल्याण के लिए स्वयं को भूल जाना ही आत्मत्याग है। उसी से ईश्वरत्व प्राप्त होता है।'

राजा प्रभावित होकर संन्यासनी (रानी) के निर्देशानुसार अपनी राजधानी में लौट आया। और वहां रानी ने अपना रहस्य प्रकट कर दिया राजा भी अपनी सहधर्मिणी के विराट् रूप के समक्ष सादर विनत था। ★

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—रामकृष्ण 'भारती'

वैदिक प्रार्थनाएं

प्रार्थना

मित्र करे कल्याण हमारा

ओं शं नो मित्रः शं वरुणः शं नो भवत्वर्यमा ।
शं न इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णुरुरुक्रमः ।।१।।
(ऋ. १, ९०, ९)[1]

मित्र करे कल्याण हमारा,
वरुण करे कल्याण सदा ।
न्यायकारी अर्यमा महां है,
इन्द्र करे कल्याण सदा ।।
बृहस्पति हम सबका स्वामी,
विष्णु उरुक्रम शान्ति करे ।
घर-घर शान्ति विराजे हरदम,
सुख-कल्याण सदा बरसे ।।

स्तुति

तुम्हीं पुरोहित हो सबके

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ।।२।।
(ऋ. १, १, १)

अग्निदेव, तेरी स्तुति करते,
तुम्हीं पुरोहित हो सबके ।
यज्ञदेव हो, ऋत्विक् भी हो,
हो तुम रत्नधनी जग के ।।
बार बार स्तुति करें आपकी,
इसे आप स्वीकार करें ।
कृपा पात्र तेरे बन जाएँ,
आनन्दित हम सदा रहें ।।
हित साधक हो सकल विश्व के,
ऋतुओं के स्रष्टा स्वामी ।
योग क्षेम करते हम सबका,
दुःख हर्ता, अन्तर्यामी ।।
ज्ञान रूप प्रभु, तुम ईश्वर हो,
हम पर तेरी रहे कृपा ।
हम सब तेरे अनुयायी हों,
नेता बन कर करो दया ।।

---

१ इस अंक-संख्या से क्रमशः अभिप्राय यह है—मंडल, सूक्त, मन्त्र ।

प्रार्थना

भक्त बनें, तेरे गुण गावें

अग्निना रयिमश्नवत्पोषमेव दिवेदिवे ।
यशसं वीरवत्तमम् ।।३।। (ऋ. १, १, ३)

ईश्वर, अग्ने दयावान् हो, कृपा करो,
कृपा करो हम सब पर नाथ ।
करें विनय हम शाम-सवेरे,
स्तुति-उपासना मिलकर साथ ।।
नर जो भी तेरी स्तुति करता,
स्वयं उपकृत होता है ।।
विद्या और मिले धन उसको,
महापुष्टि यश मिलता है ।।
नाथ ! वरों के दाता हो तुम,
हम पर यह उपकार करो ।
कृपा-दया का वर दो भगवन्,
धर्म भावना भाव भरो ।।
सुखी रहूँ मैं, सभी सुखी हों,
दुःखी न कोई हो मानव ।
भक्त बनें, तेरे गुण गावें,
कभी न हों निष्ठुर दानव ।।

स्तुति

इष्टदेव हैं आप सभी के

अग्निः पूर्वेभिर्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरुत ।
स देवाँ एह वक्षति ।।४।। (ऋ. १.१.२)

ज्योति-रूप हे भगवन्, स्वामिन्,
कौन करे वर्णन महिमा ?
अद्भुत लीला अग्नि, तुम्हारी,
गान करें हम गुण-गरिमा ।।
ऋषि:, महर्षि:, तपी-तपीश्वर,
नए पुराने सब ध्यावें ।
इष्ट-देव हैं आप सभी के,
सबको सुख से हर्षावें ।।
दुखी न जग में हो कोई भी,
सुखी रहे यह विश्व सदा ।
सब पर कृपा करो हे भगवन्,
हरो सभी की व्याधि-व्यथा ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वयं चेतन से अचेतन बन गया है आज मानव

आदि से अब तक दिवाकर, एक गति से एक क्रम से।
घूमता है निज धुरी पर, केन्द्र पर अपना न छोड़ा।
दे रहा अविराम जग को, ऊर्जा का दान प्रति पल।
है लुटाता कोष अक्षय, कर्म से पर मुख न मोड़ा।

सोख लेता सिन्धु को भी, रश्मियों की ऊष्मा से।
किन्तु रख सकता नहीं है, कोष वह जग से छिपा कर।
याचना करती धरा जब, तृप्त होता वायुमंडल।
मेघ निर्मित वाष्प से कर, वह उगल देता धरा पर।

किलकिला उठते सरित सर मेघ गर्जन घोर करते।
शस्य श्यामल-सी धरा पर, जीव सुखमय हो विचरते।
पर न जाना दिवस सारे, एक जैसे ही गुजरते।
राहु अथवा केतु निर्मित, गगन बिच हैं ग्रहण करते।

यन्त्रणा के भार बोझिल, भानु की गति में न लेकिन।
एक पल को भी उपस्थित, कर कभी व्यवधान पाते।
क्योंकि सुस्थिर केन्द्र उसने, एक पल को भी न छोड़ा।
और है आधार उसका, सब जहाँ आधार पाते।

देख जड़ को भी न मानव, केन्द्र अपना जान पाया।
कौन मर्यादा परिधि है, वह नहीं पहचान पाया।
कौन-सी मंजिल कहां पर, दूर पर कितनी कहाँ है?
है नसैनी कौन कैसी, यह न अब तक जान पाया।

वृत्तमय जीवन मनुज का, केन्द्र मानवता उसी का।
त्याग जिसको आज मानव, शांति पाना चाहता है।
तोड़कर संयम परिधि, निर्माण जीवन वृत्त का।
विषय रस रूपी गरल से, आज करना चाहता है।

स्वयं चेतन से अचेतन, बन गया है आज मानव।
जड़ जगत् की अर्चना में, ढूंढता आनन्द पागल।
ज्ञान की अर्थी सजाकर, रूढ़ियों की दासता में।
बंट गया पंथों मतों में, है चला जाता रसातल।

सूर्य के पीछे चलो, यह वेद है आदेश देता।
केन्द्र मानवता हमारा, यदि मनुज स्वीकार करलें।
शांति सुख ऐश्वर्य लेकर, सूर्य सा बन तेजधारी।
है नहीं आश्चर्य "साथी" सिन्धु भव को पार करलें।

—परमात्मा प्रसाद "साथी"

जन-ज्ञान साप्ताहिक, ३० मई १९७६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—रामकृष्ण, भारती, शास्त्री,
विद्यावाचस्पति

भारत का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम

[१८५७]

[एक संक्षिप्त टिप्पणी]

सन् १८५७ में भारत का प्रथम स्वतंत्रता संग्राम लड़ा गया। इस सम्बन्ध में देश विदेश में कई पुस्तकें विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित हुईं। प्राय: इतिहासकारों ने इसे 'गदर' का नाम देकर बदनाम करने की कुचेष्टा की है। भारत के स्वतंत्र होने के पश्चात् भी इस सम्बन्ध में जो ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं, उनमें विषय के साथ पूर्ण न्याय नहीं किया गया। हमारे सम्मुख वीर सावरकर की तत्सम्बन्धी अंग्रेजी पुस्तक का नया संस्करण है। The Indian war of Independence 1857— V. D. Savarkar [1970] प्रकाशक राजधानी ग्रन्थागार नई दिल्ली। यद्यपि इस पुस्तक की रचना को अड़सठ वर्ष से ऊपर हो चुके हैं, पर इसका जितना प्रचार अब तक होना चाहिए था, वह नहीं हो सका। आवश्यकता इस बात की है कि इस पुस्तक का घर-घर में प्रचार तथा प्रसार हो। इसके अनुवाद भी कुछ भाषाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। जिन भारतीय भाषाओं में इसके अनुवाद अब तक न हुए हों उनमें भी इसे प्रकाशित किया जाना अपेक्षित है। पं० सुन्दरलाल की "भारत में अंग्रेजी राज" पुस्तक के समान इस पुस्तक को जितना महत्त्व दिया जाना चाहिए उतना नहीं मिला। इसका एक कारण शायद वीर सावरकर के द्वारा इसका लिखा जाना भी हो सकता है पर इस पुस्तक में लेखक का दृष्टिकोण विशुद्ध रूप से भारतीय रहा है। इस पुस्तक के किसी पृष्ठ पर भी उनके तथाकथित साम्प्रदायिक विचार दृष्टिगोचर नहीं होते।

पुस्तक का प्रस्तुत संस्करण इसका आठवां संस्करण है, जो १० मई, १९७० को नई दिल्ली (राजधानी ग्रन्थागार) से प्रकाशित हुआ। इससे पूर्व इसके सात संस्करण सन् १९०९ से १९६३ ई० तक हो चुके हैं। इसके विभिन्न संस्करण इंग्लैंड, हालैंड, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, लाहौर, जापान, बम्बई तथा पूना से प्रकाशित हुए। पुस्तक प्रकाशित होने से पूर्व ही सरकार द्वारा जब्त कर ली गई थी और इसके प्रकाशन पर रोक लगा दी गई थी। पर मैडम कामा, ला० हरदयाल, सरदार भगतसिंह, श्री रास बिहारी बोस तथा नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के प्रयत्नों से इसके छिपे-छिपे प्रकाशन हुए तथा क्रान्तिकारियों में यह पुस्तक गीता के समान घर-घर पढ़ी गई। इसका मराठी अनुवाद १९६३ ई० में पूना से प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक के हिन्दी संस्करण के सम्बन्ध में हमें कोई निश्चित सूचना नहीं है। इस पुस्तक के प्रकाशन पर लगी हुई सरकारी रोक १९४७ में देश के स्वतंत्र होने पर हटी और तब पहली बार बम्बई से प्रकाशित होने पर इस पुस्तक को सार्वजनिक रूप से लोगों को पढ़ने का अवसर मिला।

इस पुस्तक के चार भाग हैं। पहले भाग में इस संग्राम के कारणों तथा पृष्ठभूमि पर विचार किया गया है। लेखक का अपना दृष्टिकोण है। वे 'स्वधर्म' तथा 'स्वराज्य' की विचारधारा में विश्वास रखते थे।

यहां यह उल्लेख कर देना आवश्यक है कि लेखक ने मूलरूप से मराठी में इस पुस्तक का प्रणयन किया था। बाद में वस्तुस्थिति को विदेशों तथा अपने देश में स्पष्ट करने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि इसका अंग्रेजी में अनुवाद करके इसे सर्वत्र प्रचारित तथा प्रसारित किया जाए। अंग्रेजी में इस विषय पर जितनी भी पुस्तकें तब तक प्रकाशित हुई थीं, वे एकांगी तथा दोष-पूर्ण थीं। सन् १८५७ से लेकर १९०५ ई० तक इस सम्बन्ध में जो भी पुस्तकें लेखक की दृष्टि में आई, उन सबको पढ़ने पर लेखक ने यह उचित समझा कि इस सम्बन्ध में संसार के सामने वस्तुस्थिति को तथ्य रूप में प्रस्तुत किया जाए।

भूमिका-लेखक द्वय ने अपनी भूमिका के प्रारम्भ में शेक्सपीयर का एक वाक्य प्रस्तुत किया है, जिसका अभिप्राय है कि एक सच्ची कथा तभी पूर्ण स्वाभाविक गति को प्राप्त होती है, जब उसे सरल तथा स्पष्ट रूप से कहा जाए—(An earnest tale speaks best, by being plainly told.)

लेखक ने अपने एक लेख में, जो उन्होंने अभिनव भारत क्रान्तिकारी सभा की पत्रिका 'तलवार' (पैरिस से प्रकाशित) में स्पष्ट लिखा था कि लेखक का इस पुस्तक को लिखने का उद्देश्य यह था कि वे अपने लोगों को सन् १८५७ की क्रान्ति के समान पुनः क्रान्ति करने के लिए संगठित करना चाहते थे। वे भारतीयों को विदेशी शासन से मुक्त होने के लिए पुन: उसी प्रकार से संगठित देखना चाते थे, जिस प्रकार देश के क्रान्तिकारी सन् १८५७ में एक ही पताका के नीचे मिलकर संगठित हुए थे। उन्होंने सन् १८५७ के शहीदों के शब्दों तथा कार्यों को अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए माध्यम के रूप में प्रस्तुत किया। वे सशस्त्र राष्ट्रीय विद्रोह (क्रान्ति) में विश्वास रखते थे। वे यह जानकर मन ही मन दुःखी और व्याकुल थे कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस उस समय तक केवल सुधार तथा शान्तिपूर्ण समझौते (हल) तक ही अपने आपको सीमित किए हुए थी। 'स्वतन्त्रता' तथा 'क्रान्ति' तथा विशेष रूप से 'स्वतंत्रता के लिए संग्राम' ये शब्द उस समय तक भारत में कहीं भी प्रचारित तथा प्रसारित नहीं हुए थे। वे भारतीय सैनिकों में इन विचारों को मंत्ररूप में फूंकना चाहते थे।

यहां यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जब १९०८ ई० में लेखक ने इस पुस्तक को मराठी में लिखा,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तब उनकी आयु केवल २४ वर्ष थी। वे लन्दन की फ्री इण्डिया सोसाइटी की साप्ताहिक बैठकों में अपने भाषणों में, जो प्रायः अंग्रेजी में होते थे, इन्हीं विचारों को प्रस्तुत करते रहते थे। एक प्रकार से वे उक्त पुस्तक के कुछ अध्यायों को ही अंग्रेजी में प्रस्तुत कर दिया करते थे। बाद में पता चला कि उनकी मूल पांडुलिपि के एक दो अध्याय कहीं खो गए हैं। बाद में यह भी पता चला कि उनकी उक्त पांडुलिपि के कुछ पृष्ठ लन्दन की खुफिया पुलिस के हाथों लग गए हैं। इस पुस्तक को भारत तथा जर्मनी में प्रकाशित करने के अनेक प्रयत्न किए गए, पर इस कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। तब इसका अंग्रेजी में अनुवाद करवाया गया। अनुवाद कार्य में श्री वी० वी० एस० अय्यर के पर्यवेक्षण में कई उच्च शिक्षा प्राप्त मराठी युवकों ने अपनी सेवाएं अर्पित कीं और यह पुस्तक हालैंड में अत्यन्त कठिनता से प्रकाशित हो हो सकी। प्रकाशित होने से पूर्व ही इस पुस्तक को जब्त घोषित कर दिया गया। अंग्रेजी समाचार पत्रों में विरोधी पत्र भी प्रकाशित हुए। पुस्तक के प्रकाशित होने के पश्चात् इसकी सैकड़ों प्रतियां भारत पहुँचाई गईं। यह बात अत्यधिक रोचक है कि सिकन्दर हयात खान भी, जो आगे जाकर पंजाब के मुख्य मंत्री बने तथा जिन्हें सरकार ने 'सर' की उपाधि से विभूषित किया, इस पुस्तक की काफी प्रतियां भारत में लाए। वे भी उन दिनों अभिनव भारत संगठन के सदस्य थे। यहां इतना और कहना अपेक्षित है कि ये सब प्रतियां भारत में बिना किसी मूल्य के वितरण तथा प्रचार प्रसार के लए भिजवाई गई तथा इनका डाक खर्च भी उक्त संगठन की ओर से ही दिया गया। आगे जाकर इस पुस्तक का अनुवाद नियमित रूप से उर्दू, हिन्दी तथा पंजाबी भाषाओं में हुआ तथा प्रसिद्ध पत्र 'गदर' में क्रमशः प्रकाशित हुआ। यह पत्र उन दिनों अमरीका से लाला हरदयाल के संरक्षण में प्रकाशित होता था। अमरीका में बसे सिख कृषकों पर इस विचारधारा का काफी प्रभाव पड़ा। इस बीच प्रथम महायुद्ध फूटा तथा भारतीय क्रांतिकारियों ने अंग्रेजों के विरुद्ध किस प्रकार जर्मन लोगों का साथ दिया, यह लम्बी कहानी है। हांगकांग, सिंगापुर तथा बर्मा में किस प्रकार सेना में विद्रोह की भावनाएं भड़की तथा नेताजी सुभाष बाबू के नेतृत्व में द्वितीय महायुद्ध के समय किस प्रकार सैनिक संगठन बने, ये सब घटनाएं इतिहास के विद्यार्थियों को भली प्रकार से मालूम हैं। इन सब घटनाओं से यह प्रमाणित हो जाता है कि सन् १८५७ ई० में ही भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के बीज डाले गए थे।

यद्यपि वे प्रयत्न उस समय सफल नहीं हो सके, पर यह नहीं भूलना चाहिए कि सन् ४७ में भारत को मिली स्वतंत्रता में उन प्रयत्नों का बहुत बड़ा हाथ था।

इस पुस्तक की कहानी अत्यन्त रोचक है। लेखक की उक्त मराठी पुस्तक की पांडुलिपि मैडम कामा को पैरिस में सुरक्षित रखने के लिए सौंप दी गई थी, क्योंकि वीर सावरकर गिरफ्तार हो चुके थे। मैडम कामा ने उसे बैंक आफ फ्रांस में अपने सेफ में सुरक्षित रख दिया, किन्तु जब जर्मनों ने फ्रांस पर आक्रमण कर दिया, तब वहां अराजकता और अशान्ति की स्थिति पैदा हो गई तथा इस बीच में मैडम कामा भी परलोकवासी हो गईं। इस प्रकार लेखक की मूल पुस्तक की पांडुलिपि अनन्त में विलीन हो गई और उसका कुछ भी पता नहीं चला। बाद में खोज करते करते इसकी प्रति प्राप्त हो गई, पर इसमें से वे एक दो अध्याय प्राप्त नहीं हो सके, जो ब्रिटिश खुफिया विभाग द्वारा चोरी कर लिए गए थे। अब यह पुस्तक अपने मूल रूप में मराठी में भी उपलब्ध है। इस पुस्तक का अनुवाद तमिल में भी हुआ तथा वह प्रकाशित भी हुआ। यह पुस्तक भारतीय क्रांतिकारियों की गीता के रूप में लोकप्रिय हुई। एक प्रकार से यह पुस्तक १८५७ के शहीदों के चरणों में श्रद्धाञ्जलि के रूप में अर्पित है। यह इतिहासकारों के लिए खोज का विषय है कि सन् ५७ की क्रांति तथा नेता जी सुभाषचन्द्र बोस के प्रयत्न विद्रोही थे अथवा देश की स्वतन्त्रता के लिए युद्ध। वीर सावरकर की इस पुस्तक ने लोगों की इस धारणा को निर्मूल प्रमाणित कर दिया कि सन् ५७ का विद्रोह गदर अथवा षड्यन्त्र था। वास्तव में इस पुस्तक ने आजादी की ज्वाला के रूप में काम किया।

इस पुस्तक में सन् ५७ के वीरों की स्मृति के रूप में राष्ट्रीय ऋण से उऋण होने का एक प्रयत्न किया गया है। जिस देश में अपने वीरों की पूजा नहीं होती, वह देश अपने अस्तित्व को स्थायी रखने के लिये कृतसंकल्प नहीं हो सकता। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस की राष्ट्रीय सेना में महिलाओं की टुकड़ी का नाम 'रानी झांसी बाई' के नाम के साथ सम्बद्ध करना यह प्रमाणित करता है कि नेताजी तथा उनके साथियों के मन में सन् ५७ के क्रांतिकारियों के प्रति कितनी श्रद्धा की भावना थी। वीर सावरकर ने सन् ५७ की क्रांति को अपने आप में कभी भी पूर्ण नहीं माना। वे इसे स्वतन्त्रता के युद्ध का एक अंश ही मानते थे। वीर सावरकर के विरुद्ध १९१० ई० में जो मुकदमा चलाया गया, उसमें वीर सावरकर के एक वक्तव्य को उद्धृत किया गया, जिसे उन्होंने १९०८ ई० को लन्दन से जारी किया था—'जो लड़ाई १० मई, १८५७ को प्रारम्भ की गयी थी, वह १० मई १९०८ को भी पूर्ण नहीं हुई तथा वह तब तक पूर्ण नहीं होगी, जब तक मई की वह १० तारीख नहीं आ जाती, जब हम अपने लक्ष्य तक पहुँच जाएं और हमारा देश स्वतन्त्र हो जाए।'

इस पुस्तक के प्रारम्भ में श्री जी० ए० जोशी तथा श्री बाल सावरकर ने लेखक की पुस्तक की जो कहानी लिखी है, उसके बिना लेखक का दृष्टिकोण पूर्ण रूप से पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। इसीलिए हमने उस सामग्री का यहां पूर्ण उपयोग किया है और इस के लिए हम दोनों विद्वान् लेखकों के हृदय से आभारी हैं। इस लेख में मूल पुस्तक के सम्बन्ध में स्थानाभाव से हम अधिक लिखने में अपने आपको असमर्थ पाते हैं। यदि निकट भविष्य में हमें अवसर मिला तो हम वीर सावरकर की पुस्तक के आधार पर सन् ५७ की क्रांति के सम्बन्ध में विस्तार से चर्चा करने का प्रयत्न करेंगे। ★

२५०) सैंकड़ा का
सत्यार्थ प्रकाश बांटें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—विश्वेन्द्र आर्य

वैदिक सामाजिक व्यवस्था में अनुशासन का महत्त्व

□

वैदिक सामाजिक व्यवस्था में अनुशासन का महत्त्व शीर्षक में दो बातें प्रमुख हैं—समाज और अनुशासन। अच्छी सामाजिक व्यवस्था अनुशासन के ऊपर ही निर्भर करती है। अतः सबसे पहले हमें समाज और अनुशासन के बारे में जानकारी होनी चाहिए। उसके बाद हमें उसके महत्त्व पर विचार करना चाहिये तथा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में 'आर्य समाज' जैसी महान् राष्ट्रवादी संस्था के सन्दर्भ में वर्तमान समय में जो अनुशासन में शिथिलता सी आ गई है, उस पर भी गम्भीरता से विचार करना है।

'गिडिंग्स' के अनुसार, 'समाज वह संगठन है जिसमें भाग लेने वाले व्यक्ति एक दूसरे के साथ व्यावहारिक सम्बन्धों में बँधे रहते हैं। या सम्बन्धों के संगठित रूप को ही समाज की संज्ञा दे सकते हैं।'

भारतीय शास्त्रकारों ने समाज की परिभाषा इस प्रकार की है—'समं अजति जनः अस्मिन् इति समाजः' अर्थात् जिसमें लोग मिलकर एक साथ, एक गति से, एक चाल से चलें वही समाज है।'

मनुष्य के लिए सामाजिक व्यवस्था अत्यन्त आवश्यक है। इसकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति समाज में रहकर ही होती है। समाज में रहकर ही आन्तरिक शक्तियों का विकास होता है। मनुष्य के लिए सामाजिक व्यवस्था उतनी ही आवश्यक है जितना कि मछली के लिए जल। समाज में ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास होता है। समाज में रहकर ही मनुष्य को उठना, बैठना, चलना, फिरना एवं सभ्यता व शिष्टाचार आदि गुणों की प्राप्ति होती है। समाज की प्रथम पाठशाला परिवार में बालक को माता पिता का प्रेम, भाई-बहिन का स्नेह एवं जीवन की समस्त सुविधायें प्राप्त होती हैं। समाज में ही मनुष्य को अपनी रुचि एवं योग्यतानुसार जीविका के साधनों की उपलब्धि होती है। एक बड़े समाज के अन्तर्गत कई छोटे-छोटे समाज हो सकते हैं और कोई एक व्यक्ति कई सामाजिक इकाइयों का सदस्य हो सकता है। विश्व समाज में अनेक राष्ट्र, राष्ट्र के अन्तर्गत विभिन्न प्रान्त और प्रान्त में विभिन्न जिले, नगर एवं जिलों में तहसील तथा तहसीलों में ग्राम आदि विभिन्न सामाजिक इकाइयों के नाम आ सकते हैं। तात्पर्य यह है कि समाज के आकार की कोई सीमा नहीं हो सकती। इसमें दो व्यक्तियों से लेकर सम्पूर्ण विश्व तक लिया जा सकता है तथा विश्व की समस्त आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक गतिविधियाँ समाज के अन्तर्गत आती हैं। परन्तु समाज में रहकर व्यक्तियों को कुछ मर्यादाओं एवं कर्तव्यों का पालन करना पड़ता है। ये कर्तव्य ही अनुशासन के अन्तर्गत आते हैं। अतः स्पष्ट है कि सामाजिक जीवन के लिए अनुशासन बहुत आवश्यक है।

अतः आइये अनुशासन शब्द पर विचार किया जाये। अनुशासन शब्द दो शब्दों अनु एवं शासन से बना है। 'शासन' मूल शब्द है जिसका व्यापक अर्थ है आज्ञा, नियंत्रण, नियम तथा 'अनु' उपसर्ग लगा है जिसका अर्थ है 'पीछे'। अर्थात् अनुशासन को 'शरीर, मस्तिष्क व आत्मा की ट्रेनिंग समझा जा सकता है।' अनुशासन केवल स्कूल या कालेज से ही सम्बन्ध नहीं रखता, बल्कि वह जीवन से सम्बन्ध रखता है। अनुशासन समस्त कार्यों की कुन्जी है और अनुशासन का वास्तविक अर्थ यही है कि व्यक्ति अपने ज्ञान को व्यवहार में लावे और अपने जीवन को इस प्रकार नियंत्रित करे कि उसकी शक्ति का अपव्यय न हो। अनुशासन की माँगें सदैव कठोर होती हैं और अपने को अनुशासन में रखने के लिए व्यक्ति को आत्मसंयम व आत्मनियंत्रण का पग-पग पर पालन करना पड़ता है।

समाज और अनुशासन को समझने के बाद आइये अब हम उस मूलभूत वैदिक सामाजिक व्यवस्था की रीढ़ या नींव 'वर्णाश्रम व्यवस्था' को जिस पर कि सामाजिक व्यवस्था टिकी हुई है, सन्दर्भ में कुछ विचार मंथन कर अनुशासन के महत्व को स्पष्ट करें।

वर्तमान समय में आश्रम व्यवस्था और वर्ण व्यवस्था का प्रचलित निकृष्ट दूषित रूप देखकर कुछेक अदूरदर्शी पुरुष उसे दकियानूसी मानने लगे हैं इसलिए आवश्यक है कि उनका शुद्ध वैदिक और वैज्ञानिक रूप अत्यन्त संक्षेप में स्पष्ट किया जावे।

आश्रम चार हैं

मनुष्य जीवन अधिक से अधिक उपयोगी और शुद्ध बन सके, इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसको चार विभागों में विभक्त किया गया है—

(१) ब्रह्मचर्याश्रम—आत्मिक और शारीरिक उन्नति मनुष्य को अपने जीवन में, जीवन के प्रथम भाग में जिसकी कम से कम अवधि २५ वर्ष है, करनी चाहिये। यही वह आश्रम है जिसमें विद्याध्ययन करके ब्रह्मचर्य के नियमों का पूर्ण रीति से पालन करते हुए समस्त अन्तः और बाह्य करणों को पुष्ट बनाया जाता है और आत्मविश्वास, आत्मसंयम एवं आत्मबल का संचय किया जाता है।

(२) गृहस्थाश्रम—जीवन के दूसरे भाग का नाम है। इसमें मनुष्य को मर्यादा के साथ विवाह करके सन्तान पैदा करनी चाहिए और उद्यम करके धन पैदा करना चाहिये। यह आश्रम चार विभागों में विभक्त है और इन्हीं विभागों का नाम वर्ण है।

गृहस्थाश्रम के चार विभाग—४ वर्ण हैं। इन चारोंमें अन्तर गृहस्थाश्रम के केवल जीविका अर्थात् जीवन यापन के उद्देश्य से किये गये हैं जिनका विवरण वेदादि सत् शास्त्रों में भरा पड़ा है। अर्थात् जो मनुष्य वेद पढ़ता एवं पढ़ाता है, यज्ञ करता एवं अन्यों से कराता तथा स्वयं दान देता एवं लेता है, वह ब्राह्मण कहलाता है, जो राज्य सबंधी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(प्रजा की रक्षणादि) सेवा करके धन पैदा करें तथा जिनके निम्न ५ कर्म हों—यज्ञ करना व कराना दान देना, वेद पढ़ना व पढ़ाना—वे क्षत्रिय कहलाते हैं और कृषि, व्यापार, पशुपालन आदि उद्योग एवं व्यवसाय करने वाले का नाम वैश्य है, और शारीरिक परिश्रम करके धन पैदा करने वालों को शूद्र कहते हैं।

वर्ण व्यवस्था की दो विशेषताएं

(१) इनमें एक तो समता का भाव निहित है। वास्तव में वैदिक समाजवाद वर्ण व्यवस्था पर ही आधारित है। वेदों में जगह-जगह मनुष्य को अज्येष्ठ और अकनिष्ठ कहा गया है। तात्पर्य यह है कि इन वर्णों में किसी प्रकार की छुटाई-बड़ाई नहीं है। अर्थात् यह नहीं कह सकते कि ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य वर्ण बड़ा है और शूद्र वर्ण छोटा है। इसका कारण बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और वह यह है कि Degrees का भेद एक प्रकार (kind) की वस्तुओं या व्यक्तियों के भीतर हुआ करता है परन्तु जिनमें प्रकार (kind) भेद है उनमें Degrees का भेद नहीं हुआ करता। यदि १०० आदमी बढ़ई का काम करने वाले हैं तो चूंकि ये सबके सब एक श्रेणी के पेशेवर हैं इसलिये इनमें हम कह सकते हैं कि अमुक बढ़ई अव्वल दरजे का है और अमुक दूसरे दरजे का इत्यादि। इनमें इस प्रकार से दरजों (Degrees) का भेद श्रेणी के अभेद होने के कारण ही कहा जा सकता है, परन्तु यदि श्रेणी का भेद होता अर्थात् यदि एक बढ़ई, दूसरा लुहार, तीसरा कृषक और चौथा सिपाही और पांचवां अध्यापक तो इनमें Degrees का भेद नहीं किया जा सकता। इसी नियम के अनुसार ब्राह्मण आदि वर्णों में चूंकि श्रेणी का भेद है इसलिये इनमें Degrees का भेद नहीं ढूंढ़ा जा सकता है। वेद ने इसीलिये मनुष्य, मात्र को अमृत पुत्र कहा है। प्रचलित छुटाई-बड़ाई अर्थात् ऊँच-नीच की भावना अर्थात् किन्हीं जातियों के पुरुषों को ऊँचा और किन्हीं को नीचा समझना, यह सर्वथा वेद विरुद्ध और आर्य समाज की शिक्षा के विरुद्ध है। इसीलिये लाखों अछूतों से अछूतपन दूर करके उन्हें अपने खान-पान आदि सभी व्यवहारों में शामिल कर लिया।

(२) दूसरी विशेषता यह है कि वर्णाश्रम व्यवस्था गुण, कर्म एवं स्वभाव पर आधारित है अर्थात् इसको जन्म-मूलक समझना वेद विरुद्ध और प्राचीन आर्य सभ्यता और शिक्षा के सर्वथा विपरीत है। ये गुण, कर्म और स्वभाव केवल गुण, कर्म पर निर्भर हैं। इसीलिए वैदिक समाजवाद की बुनियाद कर्म पर निर्भर है। इस समय पश्चिमी देशों में जितना झगड़ा पूंजी और श्रम विभाग में है, उसका कारण यही है कि वहां कर्म विज्ञान अर्थात् आध्यात्मिकता की अवहेलना करके बिना किसी धार्मिक मर्यादा के लाठी और केवल लाठी के बल से सबको बराबर करने की चेष्टा की जाती है। परन्तु समता कभी न हुई और न कभी आगे होने की सम्भावना है। जो पुरुष इस प्रकार के बल का प्रयोग करके सबको बराबर करना चाहते हैं वे बेवकूफों के स्वर्ग का स्वप्न देख रहे हैं। यदि वैदिक मर्यादा के अनुसार साम्यवाद कर्म पर निर्भर रहे तो हर एक को संतोष रह सकता है और प्रत्येक समझने लगेगा कि उसने जितना पुरुषार्थ किया है उसका फल भोग रहा है। इसमें किसी से लड़ने की बात है न झगड़ने की।

तीसरे और चौथे आश्रम

तीसरा वानप्रस्थ और चौथा संन्यास आश्रम है। मनुष्य को २५ वर्ष गृहस्थ जीवन व्यतीत करने के बाद समस्त गृह और गृह की सम्पत्ति को अपने ज्येष्ठ पुत्र के हवाले करके गृहस्थाश्रम से मुक्त होकर ५१वें वर्ष में वानप्रस्थाश्रम में चला जाना चाहिये। इस आश्रम में आकर उसे तपस्वी जीवन व्यतीत करते हुए अपनी आवश्यकताओं को न्यून से न्यून करके जनता की सेवा करनी चाहिये। इस आश्रम के लोग बिना लम्बी-चौड़ी तनख्वाह लिये मुफ्त के प्रोफेसर, अध्यापिकादि सभी पेशों की शिक्षा देने वाले बना करते थे और अब भी बन सकते हैं। इसके बाद चौथे आश्रम में प्रवेश करके जीवन के अन्तिम भाग को अभ्यास, स्वाध्याय और जनता को उपदेश देने आदि श्रेष्ठ कार्यों में व्यतीत करना चाहिये।

आश्रम व्यवस्था की एक बड़ी विशेषता

इस आश्रम व्यवस्था में सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें किसी व्यक्ति को एक नियत अवधि के बाद धन रखने के अधिकार से वंचित रखा गया है और इसीलिये धन के प्रलोभन में पड़कर पश्चिमी देशों के सदृश, कोई भी व्यक्ति आजीवन पूंजीपति बन ही नहीं सकता। वानप्रस्थ में आते समय यदि थोड़ा धन है तो वह छोड़ना पड़ेगा, यदि बहुत सम्पत्ति है तो उस पर भी लात मारनी पड़ेगी। इसीलिए आश्रम व्यवस्था का यह आदर्श है जिस की छाया में आकर न किसी को बोलशेविक बनने की जरूरत बाकी रह जाती है और न अनारकिस्ट। संसार में शान्ति का साम्राज्य इसी आश्रम व्यवस्था की मर्यादा स्थापित होने से हो सकता है।

वर्ण एवं आश्रम व्यवस्था को समझने के पश्चात् अब हमें सामाजिक व्यवस्था में जो वास्तव में वर्ण एवं आश्रम पर आधारित है, अनुशासन के महत्त्व को स्पष्ट करना है। अनुशासन का सामाजिक व्यवस्था के प्रत्येक भाग में बहुत मूल्य है और अनुशासन के बिना कोई व्यक्ति, कोई समाज, कोई राष्ट्र कायम नहीं रह सकता। प्रत्येक संस्था, प्रत्येक वर्ग, प्रत्येक समूह के लिए अनुशासन आवश्यक है। जब-जब और जहां-जहां अनुशासन की कमी रही है वहां पर भीतरी तथा बाहरी खतरे उत्पन्न हो गए हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जिस देश में अनुशासन बिगड़ा, उसको तभी खतरा पैदा हो गया। हमारे भारतवर्ष का इतिहास भी यह साबित करता है कि देश में अनुशासन-हीनता होने पर इसे समय-समय पर भीतरी तथा बाहरी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। अभी तो आपात-कालीन स्थिति चल ही रही है। पिछले वर्ष बाह्य एवं आन्तरिक, अनुशासन-हीनता अपनी चरम सीमा पर पहुंच गयी, जिससे मजबूर होकर प्रधान मन्त्री श्रीमती गांधी को 'आपात काल' की घोषणा करनी पड़ी और हम देख रहे हैं कि इस काल में देश आशातीत सफलतायें अर्जित कर रहा है। वैसे भी पिछले कुछ वर्षों में अनेक रचनात्मक कार्य हुए हैं जिनमें विज्ञान के क्षेत्र में अणु-विस्फोट, आर्यभट्ट उपग्रह एवं दूर-दर्शन केन्द्र की स्थापना निश्चित ही

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भारतीय वैज्ञानिकों की प्रगति के परिचायक हैं। २०-सूत्रीय कार्यक्रम से भी शोषित, पीड़ित जनता को राहत की सांस मिली। गरीबी कम हुई है, उत्पादन बढ़ा है, मूल्यों में गिरावट आई है। दहेज प्रथा जैसी सामाजिक कुप्रथा को जड़मूल से मिटाने के लिए आर्य समाज एवं युवक कांग्रेस के कार्य कर्ता तल्लीन हैं। अधिकतर राज्य सरकारों ने इस प्रथा पर प्रतिबन्ध भी लगा दिया है। देश एक नई आशा एवं अंगड़ाई लेकर उठ खड़ा हुआ है। देश में सर्वत्र अनुशासन जागा है तथा मद्यनिषेध कार्यक्रम को भी बढ़ावा मिला है। विनोबा ने तो आपात स्थिति को 'अनुशासन पर्व' कहा है अनुशासन का सामाजिक व्यवस्था में जो महत्त्व है वही व्यक्तिगत जीवन में है। यदि कोई व्यक्ति अनुशासन में नहीं रहता तो उसे बाहर से न तो सम्मान प्राप्त होता और न किसी का सहयोग।

अनुशासन का व्यक्तिगत, सामाजिक, राष्ट्रीय सब प्रकार के जीवन में विशेष महत्त्व है। अनुशासन का सामाजिक व्यवस्था में विशेष महत्त्व है, क्योंकि अनुशासन सामाजिक व्यवस्था को शक्ति प्रदान करता है और उसे यह क्षमता प्रदान करता है कि वह समस्त उपलब्ध स्रोतों का अपने कार्य में प्रयोग कर सके। हमें विद्यार्थियों में इसी प्रकार के अनुशासन के भाव को भरना है क्योंकि आज के विद्यार्थी ही कल के नागरिक हैं। यदि वे शुरू से ही अनुशासन के महत्व को भली भांति समझेंगे तो आगे चलकर एक सुदृढ़ समाज की रचना कर सकते हैं।

अनुशासन को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, प्रथम—नैतिक एवं ऐच्छिक और द्वितीय कानूनी अनुशासन। नैतिक एवं ऐच्छिक अनुशासन में ऐसे नियमों का पालन करना पड़ता है जिनका पालन मनुष्य स्वयं अपनी इच्छानुसार करता है। माता-पिता का आदर करना, वृद्धावस्था में उनकी सेवा करना, निर्धनों की सहायता करना आदि कर्म नैतिक अनुशासन के अन्तर्गत आते हैं। सामाजिक व्यवस्था के लिये एवं देश की प्रगति के लिये नैतिक एवं ऐच्छिक अनुशासन बनाये रखना अत्यन्त ही आवश्यक है।

कानूनी अनुशासन के अन्तर्गत मनुष्यों को उन नियमों का पालन करना पड़ता है जिन्हें न मानने पर दण्ड दिया जाता है। अनुशासन का क्षेत्र बड़ा ही विस्तृत है। ज्यों-ज्यों मनुष्य की प्रगति होती है, त्यों-त्यों उसके कर्तव्यों में वृद्धि होती रहती है। सभ्य एवं सुसंस्कृत समाज व्यवस्था में निम्नलिखित अनुशासन का पालन करना आवश्यक है—

(१) राज्य के प्रति कर्तव्य।
(२) समाज के प्रति अनुशासन।
(३) स्वयं के प्रति अनुशासन।
(४) मानव जाति के प्रति अनुशासन।

प्रत्येक मनुष्य को राज्य भक्त अर्थात् राष्ट्रभक्त होना चाहिये। अर्थात् जन्म से ही उस बालक के मानस पटल पर ऐसे संस्कारों को भरना चाहिये जिससे उसमें देश के प्रति तिल-तिल जल आत्मोत्सर्ग की भावना का उदय हो। देश की स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर कर देना चाहिए। मनुष्य का कर्तव्य यह है कि वह स्वार्थ को त्यागकर समाज के कल्याण के लिए कार्य करे। इसके अतिरिक्त यदि समाज व्यवस्था मजबूत करनी है तो मनुष्य का स्वयं के प्रति अनुशासन होना चाहिए। अपना व्यक्तिगत विकास करके ही व्यक्ति समाज का हित कर सकेगा। व्यक्ति को नागरिकता के श्रेष्ठ गुणों जैसे—स्वार्थ त्याग, सार्वजनिक सेवा वृत्ति, उदारता, सहिष्णुता, शान्ति प्रियता आदि का पालन करना चाहिए। अतः अब यह स्पष्ट हो जाता है कि अच्छी सामाजिक व्यवस्था अच्छे व्यक्तियों द्वारा होती है। प्रत्येक नागरिक को चाहिए कि वह सारे समाज को अपना परिवार समझे अर्थात् 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना होनी चाहिए।

अब हमें संक्षेप में 'आर्य समाज में अनुशासन' पर विचार करना चाहिये। आर्य समाज द्वारा हमने अपने लिये एक विशेष रास्ता चुना है—नव निर्माण। यह विशेष रास्ता है आर्य समाज की उन्नति का, प्रगति का, उत्थान का, यह वह सोपान है, जिससे दयानन्द के विचारों को समस्त भूमण्डल में फैलाया जा सकता है। दयानन्द संस्थान द्वारा प्रकाशित 'विश्व शान्ति के आधार' 'आर्य समाज के १० नियमों' के द्वारा हम सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय प्राप्त कर सकते हैं एवं महर्षि के स्वप्नों को साकार करने की दिशा में अग्रसर हो सकते हैं।

किन्तु हमारे ही कुछ लोग जो इसे पसन्द नहीं करते इसे नुक्सान पहुँचाने में जुटे हैं। वे नहीं चाहते कि इस रास्ते पर चलकर हम अपने लक्ष्य 'कृण्वंतो विश्वार्मयम्' को प्राप्त करें। उनकी जिन्दगी का रास्ता दूसरा है। वे विघटन, तोड़-फोड़, बेबुनियाद बदनामी और अस्थिरता एवं पुरानी पीढ़ी को गालियाँ देने में तथा कोसने में ही विश्वास करते हैं और इन्हीं कार्य-कलापों में आर्य समाज का भला समझते हैं। हमें ऐसे लोगों से सावधान रहना चाहिये, तभी हम आर्य समाज व स्वतन्त्रता की रक्षा कर सकते हैं। मैं एक नवयुवक हूँ। मेरा पुरानी पीढ़ी से तीव्र मतभेद है, मैं ऐसा समझता हूँ कि पुरानी पीढ़ी के लोगों को युवा पीढ़ी पर गर्व होना चाहिये। क्योंकि युवा पीढ़ी किसी भी समाज, राष्ट्र या संस्था का भविष्य हुआ करती है। आर्य समाज का तरुण नहीं तो कौन यह जिम्मेदारी निभायेगा। इस देश का अध्यात्म बूढ़ों की वस्तु नहीं, जवानों की वस्तु रही है। जब हृषीकेश ने जीवन के कुरुक्षेत्र में अपूर्व अध्यात्म का पाँचजन्य फूँका था, तब वे वृद्ध नहीं युवा थे और वह थे सारथी भारत की उत्कृष्ट तरुणाई के रथ थे। जब अपनी प्रिया की गोद में नवजात राहुल को सोया छोड़ सिद्धार्थ अपनी अद्वित्तीय सांस्कृतिक क्रान्ति के पथ पर चल पड़े थे, तो वे वृद्ध नहीं युवा थे। अद्वैतवादी शंकर ने जब अपनी दिग्विजय यात्रा की थी, तब वे वृद्ध नहीं युवा ही थे। विवेकानन्द ने शिकागो के रंगमंच पर जब वेदान्त के सार्वभौम धर्म का उद्घोष किया, तब वे वृद्ध नहीं युवा थे। राम तथा कृष्ण ने मानवता की खातिर जब दुष्टों का दमन किया तब वे वृद्ध नहीं तरुण और युवा ही तो थे। दयानन्द ने जब आर्य समाज की स्थापना की तथा जब वे घर से निकले उस समय तरुण और युवा ही तो थे। गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में रंग भेद के दावानल में कूदकर जब

(शेष पृष्ठ २३ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कहानी —श्रीमती विजय चौहान

राजधानी

★★★

दूसरी मंजिल के बरामदे में खड़ी सुनीता हांफ रही थी। उसने सब्जियों का थैला जीने पर रख दिया और चप्पल का स्ट्रैप ठीक करने लगी। हर महीने वह एक नयी चप्पल खरीदती थी। अस्पतालों के चक्कर काटते-काटते कई बार चप्पलों के तले भी टूट जाते थे। कभी यह टेस्ट करवाओ, कभी वह। बीस दिन बाद जा कर रिपोर्ट मिली तो डॉक्टर ने मल्टी-विटामिन गोलियाँ लिख कर जान छुड़ा ली। छोटे शहर में थे तो सिविल सर्जन की कोठी पड़ोस में थी। जब चाहा सलाह ले ली। अस्पताल की लेडी डॉक्टर हजार काम छोड़कर भागी-भागी आती थी। एक फोन किया और छत्तीस काम हो जाते थे। पर यहाँ कुमार साहब ने दो साल पहले फोन के लिए लिखा था और अभी तक बारी नहीं आयी थी।

छोटे शहरों में जहाँ भी बदली होती थी दफ्तर के नौकर घर का काम करते थे। भैंसों के लिए सानी करना, बच्चों को स्कूल पहुँचाना, दफ्तर में लंच ले जाना। वह तो बस बाहर बरामदे में बैठी आराम से निटिंग करती रहती थी। कभी खरीदारी करने चली जाती तो दुकानदार पसंद के लिए थान के थान घर पहुँचा देते थे।

सुनीता सोचने लगी—जबसे वह दिल्ली आयी है, एक भी नयी साड़ी नहीं खरीदी। पुरानी साड़ियों को प्रिंट करवा-करवाकर पहन रही है। घर में घुसते ही हाउसकोट पहन कर साड़ी हैंगर पर टाँग देती है। रात को दूध की खाली बोतलें और टोकन सिरहाने रखकर सोती है। जरा देर हुई नहीं कि दूध खत्म हो जाता है। कतार में खड़े होकर धक्कमधक्का करना पड़ता है।

हाँफती-हाँफती जब वह तीसरी मंजिल पर अपने फ्लैट में पहुँची तो देखा—रसोई में बरतनों का ढेर इकट्ठा है। गीता ने बताया कि आज बरतन साफ करने वाली नहीं आई। कुमार साहब बिना नहाये दफ्तर चले गये थे, क्योंकि बूस्टर पंप खराब था। उसने गीता को साबुन तौलिया पकड़ाते हुए कहा, 'जा, तू नीचे वाली आंटी के बाथरूम में नहा आ। मैं चाय के लिए पानी रख दूँ।

तीन-चार बार माचिस लगाने के बाद भी जब गैस नहीं जली तो उसने गैस के ड्रम को हिला कर देखा। बिलकुल खाली था। अब फिर नीचे उतर कर मार्केट में गैस के लिए फोन करने जाना पड़ेगा!

गीतू, आंटीजी से कहना थोड़ा-सा मिट्टी का तेल दे दें। मैं स्टोव जलाने वाली हूँ।' सुनीता ने खिड़की खोल कर आवाज लगायी।

लाख लानतें इस मनहूस शहर पर! चाय का एक प्याला भी नसीब नहीं होता! जिस साल कुमार साहब की बदली यहाँ हुई थी—पीलिया फैला था। घर के सब लोग बीमार पड़ गये थे। सुनीता का 'लिवर' तभी से खराब था और पेट में गैस बनने लगी थी। जब कभी वह हफ्ते-दस दिन के लिए मायके चली जाती तो सेहत ठीक हो जाती थी। पर दिल्ली आते ही वही पुराना सिलसिला फिर शुरू हो जाता।

'मम्मी! मम्मी!! शीला आंटी का खत आया है।' गीता नीचे से डाक उठा कर लायी थी। सुनीता की बड़ी ननद थी शीला। लिखा था कि वह बच्चों के साथ छब्बीस जनवरी की परेड देखने आ रही है। बड़ी आयी परेड देखने वाली! हम लोग तो सिर्फ एक बार देखने गये थे और उसके बाद कानों पर हाथ लगाया था। छोटे शहरों में बैठे लोग न जाने दिल्ली के बारे में कैसी कैसी बातें सोचते हैं! मुँह उठाया और पहुँच गये दिल्ली!

शीला ने लिखा था कि गीता की छुट्टी होगी। छोटे बच्चों को घर छोड़कर वे सारी दिल्ली घूमेंगे। सारे रिश्तेदारों से मिलेंगे। पिकनिक के लिए कुतुब जायेंगे। हूँ, कुतुब जायेंगे!

१९४४ मॉडल की ऑस्टिन कार लेकर जब वे दिल्ली आये थे तो पास-पड़ोस के फ्लैटों के बच्चे खेल छोड़कर कार के इर्दगिर्द जमा हो गये थे। एक लड़के ने बड़ी मासूम आवाज में कुमार साहब से पूछा था, 'अंकल, आप भी खटारा-छकड़ों की रेस में हिस्सा ले रहे हैं?' कार बेच कर कुमार साहब ने स्कूटर खरीद लिया था। छह-सात सौ रुपये अपने पास से डालने पड़े थे।

किसी ने जोर से घंटी बजायी।

'कौन?' सुनीता की आवाज में झुंझलाहट थी।

साबुन, फिनायल और लाटरी के टिकट बेचने वाली तीन-चार स्मार्ट लड़कियाँ खड़ी थीं। दो बाथरूम में घुस गयीं और उन्होंने धोबी की धुलाई के थैले में से मैली चादर और तौलिया निकालकर बिना पूछे धोना शुरू कर दिया। 'आंटीजी, आप धोबी से कपड़े क्यों धुलवाती हैं? घर में धोयेंगी तो बचत होगी।' लड़कियों के इस भाषण को सुनकर सुनीता को गुस्सा आ रहा था।

मुश्किल से उनसे पीछा छूटा तो सुनीता ने कमरे की सफाई शुरू की। कुमार साहब हमेशा कहते थे—अगर इनसान सलीके से रहना चाहे तो एक कमरे में भी रह सकता है, जिस तरह बम्बई और कलकत्ता के लोग रहते हैं। जमीन पर बिस्तरों का पिरामिड-सा बना लेते हैं और ऊपर से बेडकवर डाल देते हैं। इस फ्लैट में आ कर सुनीता को भी पुराना फर्नीचर ठीक करवाना था। अपने दहेज में मिले शीशम के नक्काशीदार पलंगों को बेच कर सोफा-कम-बेड खरीदा था, जो दिन में सोफे का और रात को पलंग का काम देता था।

शीला कितनी भाग्यवान् है! उसे जहाज-सी बड़ी सरकारी कोठी मिली है, जिस में तीन बेडरूम, दो लाउंज

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गराज तथा नौकरों के क्वार्टर है। कहती थी, बाग में इस साल तीस किलो टमाटर हुए थे। पड़ोसियों में बांटती-बांटती थक गयी थी।

कुमार साहब के आने का समय हो गया था। सुनीता ने आज दोपहर जरा भी आराम नहीं किया था। पहली मंजिल वाली ने स्टील के बरतन वाले को बुलाया था। सुनीता भी गरम कपड़े वाले ट्रंक खोलकर पुराने कपड़े निकालने लगी। और वही हुआ जो हर बार होता था। इतने कीमती कपड़े भी बरतन वाले को पसंद नहीं आये थे। वह बदले में एक कटोरी या करछी दिखा देता था और बनारसी टिशू की साड़ियों, जरी की किनारियों की फरमाइश करता था। सुनीता ने हर बार की तरह आज भी फैसला किया कि इन लुटेरों को घर में कभी घुसने नहीं देगी।

गैस और नल की दुकान को फोन करने के बाद जब सुनीता फिर ऊपर फ्लैट में पहुंची तो कुमार साहब ने हँसते हुए कहा, 'एक खुशखबरी सुनाऊं ?'

उत्सुकता से सुनीता और भी जोर से हांफने लगी थी।

'लॉटरी निकली है ?'

'नहीं।'

'विदेश जाने का मौका मिला है ?'

'नहीं।'

'तो फिर ?'

'भगवान् ने तुम्हारी सुन ली है। हमारी बदली करनाल हो गयी है। मुझे पहली को वहां ज्वाइन करना है। कल से पैकिंग शुरू कर देना। शायद मॉडल टाउन में हमें कोठी मिल जायेगी।'

सुनीता बहुत खुश थी। पिछले साल उसने प्रार्थना की थी, 'हे प्रभु, हमें दिल्ली से एक बार निकाल दे। हे प्रभु ऐसा मकान हो जिसमें सीढ़ियाँ न हों। ऐसा शहर हो जिसमें बसें और स्कूटर न हों। हर जगह पैदल जा सकूं।

× ×

करनाल में मॉडलटाउन की कोठी के लॉन में सुनीता धूप सेंक रही थी। गीता और राजन ट्रांजिस्टर से गणतंत्र दिवस की परेड का आंखों देखा हाल सुन रहे थे। कुमार साहब सुबह के पढ़े अखबार को तीसरी बार पढ़ रहे थे। उन की पड़ोसिन मिसेज वर्मा ने कहा, 'दिल्ली में तो बड़ी रौनक होगी। दिल्ली छोड़ने पर अफसोस नहीं हुआ ?'

'नौकरीवालों का क्या है, आज यहाँ, कल वहाँ !' कुमार साहब ने जवाब दिया।

'मैं तो इन से रोज कहती हूँ कि फिर दिल्ली ट्रांसफर के लिए कोशिश करनी चाहिए। दिल्ली में रहने के बाद किसी और शहर में मन नहीं लगता ?' सुनीता ने उदास स्वर में कहा और फिर चुप हो गयी। ★

(शेष पृष्ठ २१ का)

अध्यात्म का आग्नेय प्रयोग किया था, तब वे वृद्ध नहीं, युवा ही थे। जब सुभाषचन्द्र बोस ने आजाद हिन्द सेना का संगठन कर यह नारा दिया कि 'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूंगा' तब वे वृद्ध नहीं युवा थे। सरदार भगतसिंह, चन्द्र शेखर आजाद, रामप्रसाद बिस्मिल, श्याम जी कृष्ण वर्मा, अशफाक उल्ला खां, सुखदेव, राजगुरु तथा अनेकानेक क्रांतिकारी 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है' कहते-कहते देश की स्वतन्त्रता की खातिर हंसते-हंसते फांसी के फन्दों को चूम गये। ये सभी क्रांतिकारी वृद्ध नहीं तरुण और युवा ही थे। इसलिए मैं कहता हूँ कि आदर एवं श्रद्धा के योग्य बुजुर्ग लोगो आर्य समाज की युवा पीढ़ी को कार्य करने का मौका दो तथा विचारों में सामंजस्य स्थापित कर कुछ ऐसे कार्य करो जिसमें आर्य समाज की छवि धूमिल न हो। यदि आपका सही मार्ग-दर्शन और सहयोग युवा पीढ़ी के लिए मिले, तो हम कंधे से कंधा मिलाकर आपके साथ कार्य करने को तैयार हैं। दुनिया की कोई शक्ति नहीं जो आर्य समाज के कार्य को बढ़ने से रोक सके। किन्तु आजादी के बाद आर्य समाज के नामी पदलोलुप, स्वार्थी नेताओं ने कोई भी ऐसा ठोस कार्य करके नहीं दिखाया जो ऋषि के स्वप्न की पूर्ति करता हो। इसके बाद भी हमें उनका मार्गदर्शन मिले तो हम कार्य करने को तैयार हैं। आर्य समाज में पिछले २०-२५ वर्षों में अनुशासन की बहुत कमी आई है जो आर्य समाज जैसी महान् क्रान्तिकारी तथा राष्ट्रवादी संस्था के लिए अहितकर है।

अन्त में हम कह सकते हैं कि अनुशासन सामाजिक जीवन की कुन्जी है। नम्र व्यवहार की कसौटी है एवं जागरूक जीवन की निशानी है। यदि हम देश और आर्य समाज को मजबूत बनाना चाहते हैं, यदि हम चाहते हैं कि दयानन्द के विचार नगर-नगर, गांव-गाँव, गली-गली एवं कूचे-कूचे में फैले तो हमें स्वयं अनुशासन में रहना होगा। वास्तव में यदि हम अपने जीवन को सरलता, सच्चाई, उदारता एवं परोपकारिता से अपना लें तो हमारे जीवन में एक ऐसा ढाल आ सकता है जिस पर हमारे जीवन की खटारा गाड़ी भी बिना तेल पानी के आगे की ओर बढ़ सकती है। पर याद रखिए, यदि इस गाड़ी में अनुशासन रूपी ब्रेक नहीं लगाया गया तो वह किसी भी गड्ढे में गिर सकती है। अनुशासन हमारा प्राण है, वह एक निशानी है हमारे जीवन एवं देश की। और अन्त में अपनी लेखनी को यह लिखकर बन्द करूंगा कि अनुशासन के बिना मनुष्य एक 'अन्धे मानव' के सदृश है जिसे चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देता है अर्थात् वह उन्नति की ओर नहीं बढ़ सकता। किन्तु जो युवक अनुशासन प्रिय होते, अपने जीवन के साँचे को अनुशासन में ढालते हैं उनके लिए श्री कृष्ण 'सरल' की निम्न पंक्तियाँ प्रेरणास्पद हैं—

"युवकों के हाथों में ऐसा बल होता है,
इन हाथों में ब्रह्माण्ड स्वयं तुल जाता है।
जो पथ सदियों से बन्द रहा हो औरों को,
संकल्पवान् युवकों को वह खुल जाता है॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

४

जनरल जोरावरसिंह

—सय्याह सुनामी

संध्या ढल रही थी। सैन्य प्रशिक्षण, अभ्यास आदि कार्य से निवृत्त होकर जोरावरसिंह छावनी की सीमा से कुछ दूरी पर स्थित एक चट्टान की ओट में जिसके साथ दूर तक बांस के भुंड चले थे और जहाँ प्राकृतिक पर्वतीय पुष्प खिले हुए थे, एक समतल पाषाण पर लेटा हुआ था। दिवाकर शनैः शनैः पश्चिम दिशा में डूबता जा रहा था। हवा में भी धीरे-धीरे ठंडक बढ़ती जा रही थी। जोरावर का मन अपने ग्राम के शान्त और स्वतन्त्र वातावरण का स्मरण कर रहा था। उसने अपनी कल्पना के घोड़े दौडाये और सोचना आरम्भ किया कि उसके परिवार के लोग क्या कर रहे होंगे। फिर अचानक ही उसे कैन्यो की स्मृति हो आई, जिसने न जाने क्यों उसके ग्राम से विदा होने के समय अपने नेत्रों से दो अश्रु कण छलका दिए थे। कैसी थी वह भोली भाली सुन्दर युवती।

जोरावर सहसा ही उठा और उसने आस-पास से कुछ लकड़ियाँ बटोरीं। उन्हें एक स्थान पर रखकर बीच में कुछ सूखे पत्ते और कपड़े का एक टुकड़ा रखा और अपनी जेब से चकमक-पत्थर निकाल दो चिंगारियाँ उस पर झाड़ दीं तो कपड़े से धुआँ निकलने लगा। उसने फूंकें मारीं तो आग जल उठी। तदुपरान्त उसने एक छोटी धतूरी चिलम और तम्बाकू की थैली निकाली। धीरे से चिलम में दो चुटकी तम्बाकू भरा और दो लकड़ी के टुकड़ों की सहायता से छोटे-छोटे अंगारे उठाकर चिलम में भरकर जमा दिए। उसने एक घूंट भरा और तम्बाकू के धुएं का आनन्द लेने लगा।

उसने दूसरी बार घूंट खींचा, फिर तीसरी बार भी परन्तु अभी चौथा दम लगाने को ही था दो सिख सैनिक वहाँ आ पहुंचे। उनके चेहरे क्रोध से तमतमा रहे थे। जोरावर का माथा ठनका कि अब कुछ न कुछ कहा-सुनी जरूर होगी। इतने में ही उन सिख सैनिकों में से एक बोल उठा—

'कौन हो तुम ?'

'मैं आप ही की सेना का एक सिपाही हूँ।'

'सिख सेना में भर्ती होकर भी तुम तम्बाकू पीते हो?'

'मुझे भर्ती करते समय किसी ने यह नहीं बताया था कि मुझे तम्बाकू पीने की अनुमति नहीं होगी। यदि किसी ने बता दिया होता तो मैं ऐसी भूल कदापि न करता। यदि पिये बिना न रहा जाता तो नौकरी छोड़ देता। फिर इस सेना में जितने हिन्दू हैं उनमें से अधिकतर तो तम्बाकू पीते ही हैं। वे तो अपनी छोलदारियों में ही दम लगा लेते हैं। मैं तो छावनी से भी बहुत दूर हटकर अपनी लत पूरी कर रहा हूं। इस प्रकार मैंने तो छावनी और सिख बन्धुओं की भावना दोनों का ही सम्मान किया है।'

'एक तो तुमने अपराध किया है और फिर तर्क-वितर्क भी कर रहे हो।'

'तर्क-वितर्क की तो इसमें कोई बात नहीं है। मेरा अफसर मुझे आदेश देगा तो मैं नहीं पिऊंगा और पीना ही होगा तो नौकरी से त्याग-पत्र दे दूंगा ?'

'ओए मूर्खा ! हम क्या अफसर नहीं हैं।'

'मुंह सम्भाल कर बोलो।' जोरावरसिंह उठकर खड़ा हो गया और उसने अपनी तलवार सम्भाल ली।

'अरे इतना साहस !' इन दोनों ने भी अपनी-अपनी तलवारें सूत लीं। वे एक साथ ही जोरावर पर टूट पड़े। जोरावरसिंह ने पैंतरा बदला और उनके प्रहार को बचा गया और फिर उन पर ऐसा भरपूर प्रहार किया कि वे वहीं भूलुण्ठित होकर तड़पने लगे और वह वनखंड की ओर भाग निकला।

दो सैनिक अधिकारियों की हत्या की सूचना प्राप्त होते ही पूरी छावनी थर्रा उठी। सेनानायक को पता था कि ये दोनों सिख अधिकारी छोटी बातों पर असिख जवानों से झगड़ते रहते थे। उसने उन दोनों को कई बार समझाया भी था। अतः उसे सन्देह हुआ कि हो सकता है किसी अपमान का अनुभव करने वाले असिख सिपाही ने ही इनके प्राण ले लिए हों। उसने सिपाहियों की गणना कराई तो जोरावरसिंह को अनुपस्थित पाया। जिस पर उसने दस-दस सैनिकों की कई टोलियाँ उसकी खोज पर तैनात कर दीं। क्यों कि सेनानायक नहीं चाहता था कि कल को पुनः कोई ऐसा दुस्साहस कर बैठे। परन्तु इसके साथ ही साथ उसने गुप्त रूप से ऐसे सिख अधिकारियों को भी बुलाकर समझाया जो हिन्दुओं से भेदभाव बरतते थे। उसने उन्हें समझाया कि यदि उन्होंने अपनी रीति-नीति में परिवर्तन नहीं किया तो हिन्दुओं के हृदय में भी उनके प्रति घृणा की भावनाए बढ़ेंगी और वे भी सिखों की सहायता से अपना हाथ खींच लेंगे। एक ओर पंजाब केसरी हैं जो डोगरों, क्षत्रियों और ब्राह्मणों को अपनी दाईं भुजा बनाए हुए हैं और उन्हें पुरस्कार, जागीर और उपाधियां दे देकर अनेक सैनिक अभियानों पर भेजते हैं और एक तुम हो कि इस प्रकार के संकुचित विचारों का प्रदर्शन कर दूध में विष मिलाने की चेष्टा कर रहे हो। हिन्दू तो हैं ही अपने, शेरे पंजाब तो मुसलमानों तक को अपनाए हुए हैं, उनके राजदरबार में फकीर अजीजुद्दीन को जो सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त है तुम में से किसी सिख सरदार को प्राप्त है क्या ? यदि सिख राज्य को ईरान और चीन की सीमाओं तक फैलाना है और आगे बढ़ते आ रहे अंग्रेजों से निपटना है तो हिन्दुओं से घृणा करके तो ऐसा नहीं किया जा सकेगा। वस्तुतः हिन्दू हमारे ही हैं, हम हिन्दुओं के खड्ग हस्त। सात समुद्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पार से आए अंग्रेजों की सेवाओं में तो हिन्दू, मुसलमान सिख और ईसाई सभी नौकर हैं। परन्तु वे किसी को भी यह आभास नहीं होने देते कि उनके धर्म के मामले में कोई हस्तक्षेप किया जा रहा है। इधर तुम अपने हिन्दू बन्धुओं से ही, जिनके साथ हमारा नाखून और मांस तथा रोटी और बेटी का सम्बन्ध है, घृणा का व्यवहार करते हो।'

इन सैनिकों की समझ में कुछ आया और कुछ न आया और वे वहां से हटकर उन सैनिक टोलियों में जा मिले, जो जोरावरसिंह की खोज में जा रही थीं। इन टोलियों ने आस-पास के वनों और टीलों का चप्पा-चप्पा छान मारा परन्तु जोरावरसिंह उनके हाथ नहीं आ पाया।

जोरावरसिंह ने कुछ दिन तक तो लोगंडा के वनों में वहां के थानेदार धर्मसिंह के यहां आश्रय ग्रहण किया। फिर वह लम्बागिरां के राजा के यहां जाकर नौकर हो गया। परन्तु खोज करने वाले सैनिकों को भी किसी प्रकार इसके सम्बन्ध में जानकारी मिल गयी। वे भी उसकी खोज करते और टोह लगाते वहां आ पहुंचे और उन्होंने राजा लम्बागिरां की गद्दी का घेरा डाल दिया। उन्होंने अपने सेनानायक को वहां सेनाएं लेकर पहुंचने की सूचना भिजवा दी।

सेनानायक भी ससैन्य वहां आ पहुंचा और उसने राजा को सूचना भिजवा दी कि हमारे अपराधी को तत्काल हमें सौंप दिया जाय अन्यथा गढ़ी की ईंट से ईंट बजा दी जायेगी। लम्बागिरां के राजा के पास प्रतिकार करने योग्य सेना नहीं थी। उसने सेनानायक को सूचित किया कि वे अपराधी को केवल एक शर्त पर ही सौंपने को तैयार हैं कि इस अपराधी को छावनी में ही दण्ड न देकर उसके विरुद्ध विधिवत् अभियोग चलाया जाए और उसे महाराजा रणजीतसिंह के सामने उपस्थित किया जाय। वहां जो भी फैसला हो उसे क्रियान्वित किया जाए।

सिख सेनानायक ने यह शर्त स्वीकार कर ली। वह दूरदर्शी व्यक्ति था अतः स्वतः जोरावरसिंह को मृत्यु दण्ड देकर सम्पूर्ण डोगरा जाति में सनसनी और उत्तेजना का सृजन न करना चाहता था, जबकि दो डोगरा सामन्त-महाराजा रणजीतसिंह के प्रमुख विश्वास-पात्र बने हुए थे। ये थे राजा ध्यानसिंह व गुलाबसिंह।

लम्बागिरां के राजा ने जोरावरसिंह को सेनानायक को सौंप दिया और सिख सैनिकों ने उसे अपनी हिरासत में ले लिया।

'जोरावर!' सिख सेनानायक बोला 'कारण चाहे कुछ भी था, किन्तु तुमने अपने दो साथी सैनिकों की हत्या करके अच्छा नहीं किया। यह एक ऐसा अपराध है कि इसका दंड तुम्हें अवश्य ही मिलेगा।'

'हुजूर! सरदार साहेब। मैं सारा ब्यौरा बताता हूं।'

मैं कुछ भी नहीं सुनना चाहता। सिपाहियो इसे देहरा गोपीपुर के दुर्ग में ले जा कर बन्दी रखो! इसका मामला लाहौर दरबार में ही प्रस्तुत किया जायेगा। महाराजा साहब ही इस मामले का निर्णय करेंगे।

सिपाही जोरावरसिंह को वहां से ले गये और देहरा गोपीपुर के सिख सरदार को सौंप दिया।

'बड़ा भयानक अपराधी है, तनिक सावधान रहना, इसका मामला लाहौर दरबार में प्रस्तुत किया जाना है।

'चिन्ता न करो! इसकी गर्दन में तौक, हाथों में हथकड़ियों और पैरों में सवा मन की डण्डा-बेड़ी डलवा दी जायेगी और इस पर भी इसने कोई गड़बड़ी की तो इसका अन्न पानी भी बन्द करा दिया जाएगा।'

उसने जोरावर सिंह को जिसकी मुश्कें बंधी हुई थीं एक जोरदार धक्के द्वारा दुर्ग के भीतर धकेल दिया और सिपाही रसीद प्राप्त कर वापस लौट गए।

'शकल सूरत से तुम बड़े भले लगते हो, फिर क्या बात है कि तुमने ऐसा दुष्कृत्य कर डाला?' देहरा गोपीपुर के दुर्ग अधिकारी ने जोरावर से पूछा।

जोरावर सिंह चुपचाप खड़ा रहा। दुर्ग अधिकारी प्रवेश द्वार के पहरे वाले को सम्बोधित कर बोला 'इसे अपनी हिरासत में ले लो। पूरी निगरानी रखना और लाहौर आए तो इसके पैरों में बेड़ियां डलवा देना। भूल न जाना···खाना खा लिया अथवा नहीं।' यह प्रश्न उसने जोरावर सिंह से किया। जोरवर सिंह ने सिर हिला दिया।

'अभी भिजवाता हूं।'

दुर्ग में सैनिकों की संख्या थोड़ी ही थी। पहरे का प्रबन्ध भी सामान्य ही था। फिर भी उनसे लड़कर भाग निकलना संभव नहीं था। जोरावर सिंह अपने निकल भागने की समस्याओं पर विचार करने लगा।

यह दुर्ग व्यास नदी के तट पर स्थित था। सरिता का गहन जल दुर्ग के नीचे ठाठें मारता हुआ बह रहा था। जोरावरसिंह ने अपनी मीठी और लुभावनी बातों से पहरेदारों को कुछ मोहित सा कर दिया कि वे उसकी ओर से निश्चिन्त ही हो गए। दुर्गनायक को तो शायद सिपाही बता गए हों किन्तु पहरेदारों को कुछ पता नहीं था कि जोरावरसिंह को किस अपराध में बंदी बनाया गया है। उन्होंने अपने ढंग से ही कुछ उलटा सीधा अनुमान लगा लिया था।

रात्रि में जब गगन मंडल सघन घनों से आच्छादित था और हलकी-हलकी बूंदा-बांदा भी आरम्भ हो गई थी तब जोरावरसिंह ने बच निकलने की योजना बनाई। उसने निश्चय कर लिया कि बच निकलना है तो इसी रात में यह संभव होगा। यदि उसने अब कोई ढील की तो उसे लाहौर दरबार में पेश करने के लिए लिवा ले जाने के लिए सिपाही हथकड़ियां लेकर आ जाएंगे। फिर तो छुटकारे की कोई संभावना ही नहीं रह जायगी।

जोरावरसिंह देखता रहा कि आधी रात के पहरे वाला ऊंघता-ऊंघता सो गया था। पहरेदारों की मशाल भी हवा के झोंकों और वर्षा की हलकी-हलकी बूंदों से बुझती सी जा रही थी।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वह धीरे से उठा और उसने एक सिपाही के बिस्तर से उसकी तलवार निकाली। एक अंगोछे में दो रोटियाँ भी लपेट लीं। ये उसने दोपहर के भोजन में से बचा ली थीं। फिर वह दीवार के साथ लगी सीढ़ी पर चढ़ने लगा। उससे पहले दुर्ग की प्राचीर के कंगूरे पर पहुँचा और फिर बुर्ज की छत पर चढ़ गया, जिसके नीचे बहती हुई सरिता की उत्ताल लहरें दूर तक फैली हुई थीं। उसकी ये तरंगें बड़ी भयानक सी प्रतीत हो रही थीं यह विचार किए बिना कि नदी की धारा के मध्य कोई चट्टान है अथवा भंवर, किसी घड़ियाल या मगर-मच्छों के भयानक जबड़े हैं या कोई अन्य संकट, उसने बुर्ज से नदी की लपलपाती लहरों में छलांग लगा दी।

उसके कानों के पास हवा जोरों से सनसनाई, हृदय तेजी से धड़का और इसके साथ ही उसका शरीर ठंडे पानी में आ गिरा। उसके गिरने से एक जोरदार धमाका हुआ, जिसकी गूंज शीघ्र ही सरिता की लहरों के कोलाहल में विलीन हो गई।

एक क्षण के पश्चात् ही उसने जोर लगाया और वह लहरों के साथ-साथ तैरने लगा। उसने अपनी चेतना स्थिर की और मन को पुन: मजबूत बनाया, मस्तक और आँखों को पोंछा और तलवार को मुख में दबाकर दोनों हाथों का सहारा लेकर तैरता रहा।

यद्यपि जल-प्रवाह नितान्त तीव्र था, किन्तु फिर भी वह अपनी पूर्ण शक्ति से लहरों को चीरता हुआ सरिता के दूसरे तट की ओर बढ़ता जा रहा था। व्यास नदी का शीतल जल उसके शरीर को सुन्न किए दे रहा था। उत्ताल तरंगें जोरावरसिंह के सिर पर से होकर निकलने को आतुर प्रतीत हो रही थीं। अन्धकार में यह पता न लग पा रहा था कि तट अभी और कितनी दूर है। वह यह भी निश्चय नहीं कर पा रहा था कि सही दिशा में तैर भी रहा है या नहीं। सहसा ही बिजली चमकी और उसकी चमक में उसने देखा कि वह अब तट के समीप आ पहुँचा है। उसने बड़ी तेजी से हाथ मार कर तट को जा पकड़ा और प्रयास कर उस पर चढ़ गया।

तट पर पहुँचने के पश्चात उसने अपने गले में बंधी दो रोटियों की पोटली को टटोला। रोटियाँ सुरक्षित थीं। उसने पोटली गले से खोलकर हाथ में ले ली। प्रचण्ड वेग से बहती व्यास नदी को तैर कर पार करने में उसे इतना अधिक जोर लगाना पड़ा था कि उसे अपनी छाती फटती सी लगी। उसका सांस बुरी तरह फूल गया था। उसका जी चाहता था कि यहीं तट पर लेट जाए, परन्तु वह लेट कर विश्राम भी तो नहीं कर सकता था। क्योंकि अभी भी तो खतरा उसके सिर पर सवार था। पता नहीं कब दुर्ग में तैनात सिपाहियों को उसके फरार हो जाने का पता लगा हो और वे उसे पकड़ने के लिए ही निकल पड़े हों। अत: वह रात बीतने से पहले ही अधिक से अधिक दूर निकल जाना चाहता था। वह उठा और तीव्र गति से पग उठाता हुआ बढ़ चला। उसके भीगे वस्त्र चलते समय आवाज कर रहे थे। अत: उसने जांघिये के अतिरिक्त अन्य सभी वस्त्र उतार दिये और उन्हें निचोड़ा और अपने हाथों में ले लिया। उसने अपने जूतों में से भरा पानी निकाला और उन्हें पहन कर चलने लगा।

इधर वर्षा भी अब और तेज हो गई थी। वह चाहता था कि कुछ समय अभी बिजली न चमके तो ठीक हो। क्योंकि वह शीघ्र किसी घने बन में पहुँचने का प्रयास कर रहा था। परन्तु फिर भी बिजली बीच-बीच में चमकती ही रही और रह-रह कर तोपों के पतीलों से उभरने वाले स्वरों के समान घन गर्जन तर्जन भी जारी रहा। बिजली की कड़कड़ाहट की प्रतिध्वनियां पर्वतीय श्रेणियों में और भी तेजी से गूंज उठती थीं।

जोरावरसिंह साहस सँजोए तीव्र गति से बढ़ता घने जंगल में पहुँच जाने में सफल हो गया। इस घने और हिंसक प्राणियों से युक्त वन में वस्तुतः वर्षा ही अब उसकी सहायक सिद्ध हो रही थी, क्योंकि इसके कारण ही वन के हिंसक पशु अपनी कन्दराओं, कछारों और बिलों तथा छिद्रों में दुबके बैठे थे।

ऐसा लगता था कि आज की रात कभी समाप्त न होगी और दिन ने भी उदित न होने की सौगन्ध ग्रहण कर ली है। थकान और शीत ने भी मानो जोरावर पर इकट्ठे ही हल्ला बोल दिया था। उसके पैर शिथिल हो रहे थे। उसका शरीर भयंकर शीत के कारण ठिठुर रहा था। रोंगटे खड़े हो गये थे, दांत बज रहे थे किन्तु अभी भी उसका आत्मबल तो अडिग ही था। अत: वह हताश न होते हुए आगे बढ़ता रहा। अन्तत: दिन निकला और चतुर्दिक प्रकाश फैल उठा। यह घना वन पूर्णतः सुनसान था किन्तु सौभाग्य से जोरावर के पास अभी भी दो रोटियाँ और तलवार मौजूद थी। वह एक स्थान पर ठहरा और उसने अपने गीले वस्त्र सूखने के लिए एक झाड़ी पर फैला दिए। वर्षा थम चुकी थी। पूर्व की ओर आकाश भी खुल गया था। उसने यह सोचकर राहत की सांस ली कि अब कुछ ही देर बाद सूर्योदय हो जायेगा और उसकी धूप में वह अपने शरीर को गरमा सकेगा।

अभी कुछ क्षण भी न बीते होंगे कि उसे लगा कि कुछ दूरी पर कुछ व्यक्ति बातचीत कर रहे हैं। जोरावर सिंह ने तत्काल अपने कपड़े समेटे और बांसों के एक झुण्ड में जा छिपा।

आवाजें अब और भी समीप आ गईं। फिर वे आदमी भी सामने आते दिखाई देने लगे। ये तीन थे। इनके हथियार इनके पास थे। और बिस्तर भी कंधों पर। उनके वस्त्र भी भीगे हुए न थे, जिससे यह स्पष्ट हो रहा था कि जब रात्रि में घनघोर वर्षा हुई थी तो वे सफर नहीं कर रहे थे।

पास आने पर जोरावरसिंह ने देखा कि ये तो वही डोगरा सिपाही हैं, जिनसे सेना में भर्ती होते ही एक छोलदारी में जोरावरसिंह की पहले भेंट हो चुकी थी। इनमें से दो के नाम का भी उसे स्मरण था। ये थे भीकम सिंह और धर्मसिंह। तीसरा कोई अन्य था। जोरावरसिंह के मन में विचार आया कि हो सकता है कि सिख सेनानायक ने उसे बन्दी बनाकर लाने के लिए ही इन्हें भेजा हो किन्तु फिर भी उसे विश्वास था कि इनसे भयभीत होना निरर्थक है।

उसने साहस बटोरा और वह बांसों के झुण्ड से बाहर निकला और अपने पास से होकर जा रहे डोगरा सिपाहियों

(शेष पृष्ठ ३२ से ३४ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—अर्जुन देव आर्य

समाज के लिए अभिशाप दहेज प्रथा

ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँ समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ॥

मेरे प्रिय पाठकगण ! आइये आज मैं आप लोगों को एक दर्दभरी कहानी सुनाता हूँ।

वर खोजते खोजते थका हुआ पिता ग्रीष्म की चिलचिलाती धूप में चलते-चलते अचेत होकर गिर पड़ता है, और जब उसे चेतना आती है तब उसके मुख से अनायास ही यह दर्दभरी आवाज निकल पड़ती है—

कन्येति जाता महतीह चिन्ता
कस्मै प्रदेयेति महान् वितर्कः।

पुत्री हुई है, अति चिन्ता का विषय है; इसे किसको दिया जाए ! यदि दे भी दी जाय तो भी वहाँ खुशी होगी या नहीं यही चिन्ता सताती है।

दहेज प्रथा से आर्य जाति को कितनी क्षति पहुँच रही है इसका अनुमान लगाना मेरे जैसे अल्पज्ञों का विषय नहीं। आज हम प्रति वर्ष रावण का पुतला जलाते हैं किंतु यहाँ उपस्थित लाखों रावणों को देख नहीं पाते। रावण का सीता हरण नगण्य है, द्रौपदी का चीर हरण भी नगण्य है किंतु आज जितना इस देश में नारियों का अपमान हो रहा है उतना किसी भी काल में नहीं हुआ। हम प्रति दिन आकाश को भी फाड़ देने वाला यह उद्घोष करते हैं कि—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः

"जिस कुल में नारियों की पूजा होती है, जहाँ नारियों का सत्कार होता है; उस कुल में दिव्य गुण और उत्तम सन्तान होते हैं। और जिस कुल में स्त्रियों की पूजा नहीं होती वहाँ उनकी सब क्रियाएं निष्फल हो जाती हैं।"

धन्य है यह भारत भूमि जहाँ देवता भी तन धारण कर आने को ललचाते है। धन्य हैं वे ऋषि जिनके तप के बल से आज यह देश जगत्गुरु कहलाता है। धन्य है यहाँ की शीतल छाया, जो संसार के झुलसे हुए लोगों को सुख शान्ति पहुँचाती है।

हे जगत्-गुरु भारत ! संसार को आलोकित कर आज स्वयं तुम गहरे गर्त में गिर चुके हो और पवित्र नारियों के आँसुओं की बाढ़ तुम्हें बहाकर न जाने कहाँ ले जायेगी। सर्वत्र ही त्राहि माम्, पाहि माम् का करुणक्रन्दन दिशाओं का भी कान फाड़ रहा है।

हे वसुन्धरा के वक्ष को फाड़ कर उगने वाले अन्न ! नारियों के सुख चैन को निगलने वाले अजगरों का वक्ष क्यों नहीं फाड़ता ? नारियों के अधिकार को छीनकर उन्हें पैर की जूती समझने वाले पिशाचों के रुधिर से यह वीरभोग्या वसुन्धरा लाल क्यों नहीं हो जाती।

स्त्री शिक्षा को, स्वयंवर की आदि रीति को और समाज में नारियों के उच्च स्थान को स्वार्थी लोगों ने निगल डाला और राम, कृष्ण प्रताप, शिवा को जनने वाली माता पाँव तले रौंद दी गयी। वैदिक ऋचाओं की व्याख्या करने वाली ब्रह्मवादिनी माताओ तुम्हारा घोर अपमान किया जा रहा है। कन्याओं के धन से वरों का शरीर तौला जा रहा है।

भारत माँ ! तुम कभी सोने की चिड़िया थी, और आज वरों की चिड़िया हो गई हो। धन्य है वह तुम्हारा पुत्र जिसके आते ही खुशियां की बधाइयाँ बजती हैं।

जब लाल घर में आता है;
खुशियाँ बधाइयाँ बजती हैं।
आमोद तो सदा अविराम ही होते;
माताएँ हँसती गाती हैं ॥
हँसती लक्ष्मी चन्द्रकला सी;
जब कन्या घर आ जाती है।
राग रहित अति हीन पड़ा सा;
जननी भी मुर्झा जाती है ॥

× ×

अबला जीवन हाय ! तुम्हारी यही कहानी
आँचल में है दूध और आँखों में पानी

माताओ! यह प्रवचंना तुम्हें ही दी जा रही है। तुम्हें मोहने के लिए यह भी कहा जा रहा है—

नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष स्रोत सी बहा करो,
जीवन के सुन्दर समतल में ॥

हे पीयूष स्रोत, तुम्हारे लिए समतल कहाँ है ? तुम्हारे लिए तो पथरीला पठार छोड़ दिया गया है। बहना है तो बहो, नहीं तो पर्वतों की घाटियों में सड़ना ही पड़ेगा।

माताओ तुम्हें पाताल लोक में जन्म लेना था ताकि भारत के दलाल वरों को तुम अपने धन से खरीद सकतीं पर तुम अपनी प्यारी मातृभूमि भारत को नहीं छोड़ सकतीं चाहे आँसुओं का महानद क्यों न बह जाए।

बन्धुओ ! आओ लता बहन की आत्मा से पूछ जिनकी मृत्यु सन् १९७५ ई० में हमारे इस पवित्र देश की राजधानी दिल्ली के दरियागंज में हुई। उसके पिता ने उसे पढ़ाया, नौकरी दिलवाई और बाईस वर्ष की युवा-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वस्था में नोटों से तौलकर वर को खोजा व विवाह किया गया। किन्तु अभी वर के माता पिता का पिशाच पेट भरा नहीं गया। कुछ ही दिनों में उसके कपड़ों में मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी गई और अपने ही कमरे में अपने पिता की निर्धनता को कोसते हुए वह सदा के लिए चली गई। "दूसरे की बेटी को बहू बनाने वाले उन माँ-बाप को तनिक भी दया नहीं आयी, जिनकी बेटियाँ अन्य घरों में बहू बनकर गयी हुई हैं।"

एक घटना दिल्ली के ही पहाड़गंज की सुनिये। एक बहन को माँ-बाप ने पढ़ाकर एम. ए. पास कराया। सरकारी स्कूल में उसे नौकरी मिली। उसके पिता ने बड़ा योग्य वर खरीद कर उसका विवाह किया। किंतु उसकी सास का पेट कई दिन की भूखी कुतिया के समान था, जो इतने से नहीं भरा। उसके वेतन में से दहेज का पैसा वसूल करने लगी। जब वह महीने की प्रथम तिथि को वेतन लेकर आती, सास दरवाजे पर मिलती और सारा का सारा वेतन उससे हड़प लेती। अन्त में वधू का जीना दूभर हो गया तो उसने कुएं में छलांग लगाकर आत्महत्या कर ली।

ऐसी अनगिनत घटनाएँ आये दिन हमें देखने को मिलती हैं।

क्या यह बहनों, माताओं और बेटियों पर अत्याचार नहीं है?

हम जानते हैं जिस कुल में लड़की पैदा होती है उस कुल से चली जाती है। बीस वर्ष तक माँ-बाप के घर रहकर कार्य करती है। जिस प्रकार उस घर में लड़का जन्म लेता है उसी प्रकार माता पिता से वह भी जन्म लेती है उसका भी उस परिवार में अधिकार होता है। संसार इस बात को स्वीकार करता है कि "कन्याओं का अधिकार अपने पिता की सम्पत्ति पर उतना ही है जितना पुत्रों का"। हमारी सरकार ने भी नारियों को समानाधिकार प्रदान किया है भारतीय संस्कृति का मूल मन्त्र जीवन को सुखी बनाना है। "जीवन रूपी गाड़ी के स्त्री और पुरुष दो पहिए हैं। ये दोनों पहिए तभी सुदृढ़ रह सकते हैं जब दोनों का समान स्थान हो।

प्रभु की अमर वाणी हमें बताती है कि—

नारी गृह लक्ष्मी है। वह घर की आन्तरिक व्यवस्था संभाले और पुरुष बाहर से धनोपार्जन कर लावे। पति पत्नी की रक्षा और पत्नी-पति की रक्षा करती है। इस प्रकार दोनों का सम्बन्ध एक दूसरे से प्राण और शरीर का है तथापि वेदों ने पुरुष को अधिक भार दिया है। दोनों के उत्तम जीवन तथा सौभाग्य प्राप्ति के लिए पाणिग्रहण, कन्या दानादि संस्कार कराये जाते हैं।

जब से स्वार्थान्धों ने ऋषियों की पद्धति की अवहेलना की है तब से कन्या और वर की स्वयंवरण करने की प्रथा को भी हड़प लिया और वर कन्या के मधुर जीवन को नरक में बदल दिया है।

स्वयं के अधिकार से वंचित नारी सबसे अधिक सतायी गई और इस बीसवीं सदी में जबकि १९७५ ई० में ही महिला वर्ष यू० एन० ओ० द्वारा मनाया गया और समस्त अधिकार नारियों को दिये गए। यह महान् कार्य सफल हो तथा दहेज के भार से दबी हुई भारतीय नारी को सांस लेने का शुभ अवसर प्राप्त हो, यही समय की पुकार है।

बहनो! तुम्हें आगे बढ़ना है। तुम आगे बढ़ो। कभी तुम्हारे लिये कहा गया—

"नारी की छाया पड़त—अन्धा होत भुजंग।
ढोर गंवार शूद्र पशु नारी
ये सब ताड़न के अधिकारी।

तुम वीरप्रसविनियों को पैर की जूती कहा गया। कभी अमेरिका जैसे देश में यह कहा गया कि नारियों में आत्मा नहीं होती। इस प्रकार तुम्हें सदैव उपेक्षा की दृष्टि से देखा गया। तुम आज भारत जैसे महान् राष्ट्र की महान् नेत्री तुम्हीं हो। श्रीलंका, इस्राईल आदि देशों में यहाँ तक कि ब्रिटेन जैसे देश में भी तुम नारियों का ही शासन है।

तुम जागो स्वर्ण विहान आया है।
देव दयानन्द ने तुम्हें जगाया है॥
मत तोलो तुम आत्मा को
यह तो अमर सनातन है।
दहेज के चन्द टुकड़ों से
होता जीवन दूभर है॥
लगी कालिमा तुम पर है,
नर सिंहनी हो तुम गरज पड़ो।
जननी हो अभिमान जगत् का
ममता बन तुम बरस पड़ो॥

अन्त में आइये, हम सब मिलकर विचारें कि—

"क्या इस जगत्गुरु भारत में दहेज प्रथा जैसी कुप्रथा को समूल नष्ट करने का समय नहीं आ गया?" अतः आयें, हम सभी मिलकर पग उठायें। प्रत्येक घर में प्रवेश करते हुए इस दहेज रूपी विषधर के फण को कुचल डालें।

लालबहादुर शास्त्री उन दिनों उत्तर प्रदेश में गृह-मंत्री थे। एक दिन सार्वजनिक निर्माण-विभाग वालों ने उन की कोठी पर कूलर लगाने की सारी तैयारियाँ कर लीं। रात को जब शास्त्रीजी कार्यालय से घर लौटे तो पूछा, 'यह सब क्या है?'

परिवार के सदस्यों ने कूलर लग जाने की बात बतायी।

शास्त्रीजी बोले, 'नहीं, नहीं! यह नहीं चलेगा। कूलर लगने से तो आदत बिगड़ जायेगी। हमें तो छांव में बाहर रहना है।' सार्वजनिक निर्माण-विभाग के अधिकारी को उन्होंने फोन कर दिया कि कूलर नहीं लगेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—महेशचन्द्र गुप्त

हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः

□□□

वाणी सत्कार अथवा तिरस्कार का कारण होती है। अप्रिय वचन कटुता व वैर को आमंत्रित करते हैं। मधुर वचन को वशीकरण मंत्र की संज्ञा दी गई है। इससे सुख व सौहार्द उपजता है।

मनुष्य मधुर वाणी श्रवणार्थ उत्कंठित भी रहता है। उसे मृदु वचन अत्यंत प्रिय एवं सुखकर लगते हैं। मानव प्रकृति की यह विशेषता है। कहा भी है—'मुखसुखा वाचो मधुराः कस्य न प्रियाः'। अर्थात् मुख को सुख देने वाली मधुर वाणी किसे प्रिय नहीं लगती ?

कपटी को कपटी, कुटिल को कुटिल अथवा कुलटा को कुलटा सुनना रुचिकर नहीं लगता। अभिप्राय यह है कि मनुष्य अच्छे-बुरे सभी कर्मों एवं व्यवहारों में कर्णप्रिय वचन सुनने का अभिलाषी और आग्रही होता है।

वस्तुतः कटुभाषी होना ठीक नहीं। किंतु मृदुभाषी होने का यह अर्थ भी नहीं कि मनुष्य मिथ्याभाषी हो जाय। उदाहरणार्थ दुर्जन को सज्जन, भोगी को योगी, दुष्ट को शिष्ट, निकृष्ट को उत्कृष्ट, बुद्धिहीन को बुद्धिशील अथवा वारांगना को वीरांगना या कुलांगना कहना कदापि उचित नहीं। यही नहीं, अपितु यह मूढ़ता की चरम सीमा अथवा उन्मत्त प्रलाप हैं।

जो लोग सदैव ठकुरसुहाती कहने व सुनने के पक्षपाती तथा अभ्यस्त होते हैं, वे दुर्बुद्धिग्रस्त अथवा कालवश ही होते हैं।

शास्त्र का आदेश है—सत्यं वद। सत्य बोलना परम धर्म माना जाता है। किन्तु यह भी असत्य नहीं कि सत्य अति कटु लगता है। मानव प्रकृति की यह विचित्रता ही है। विरले ही सत्य ग्रहणार्थ उद्यत रहते हैं।

मधुरभाषी होना सद्गुण अवश्य है किन्तु अपवाद-रहित नहीं। ऐसे अनेक अवसर आते हैं कि जब जिह्वा को शहद में डुबोकर बोलना शक्य नहीं होता। हितैषणावश कुछ कटु वचन कहना अपरिहार्य हो जाता है। ठीक वैसे ही जैसे रुग्ण के लाभार्थ वैद्य को कड़वी भेषज पिलानी पड़ती है।

ऐसे अवसरों पर अन्यों की अप्रियता अथवा अप्रसन्नता का विचार सर्वथा उपेक्ष्य एवं त्याज्य हो जाता है तथा कर्तव्य का विचार अपेक्षित एवं अंगीकार योग्य। जो ऐसे हितैषी का अनादर नहीं करता, वह यशस्वी होता है। स्पष्टभाषी कभी धूर्त नहीं होता और न कपटी। मिष्ट-भाषी हो भी सकता है।

यह अतिशय विडम्बना है कि मनुष्य कठोर परन्तु परिणाम में हितावह कथन को शिरोधार्य करने हेतु तत्पर नहीं होता। वक्ता पर क्रोध की उष्ण फुफकार मारता है न कि कृतज्ञता की शीतल बौछार।

संत तुलसी की सूक्ति है कि लोगों की यह रीति है कि वे आँखों के फूटने का कष्ट तो सह लेते हैं परन्तु अंजन लगाने का कष्ट नहीं सहते। जो अंजन लगाने का कष्ट सह लेता है, वह अंधा नहीं होता।

शुभचिन्तक के नाते कदाचारी को आचरण सुधारने हेतु कहा जाय तो वह विपरीत अर्थों में ग्रहण करता है। कल्याणकारी कथन को कर्णशूल-सा अनुभव करता है। आँखें लाल-पीली करने लग जाता है। यही नहीं, प्रतिष्ठा हनन मानने लगता है। मानो कदाचरण क्षम्य हो, सत्परामर्श अक्षम्य। ऐसे ठाकुर (?) ठकुरसुहाती सुनने के अनुरागी होते हैं।

इस संदर्भ में विदुर द्वारा धृतराष्ट्र को उपदिष्ट महाभारत का एक श्लोक उद्धृत है। यह श्लोक अति न्यून पाठभेद से वाल्मीकीय रामायण में भी रावण के प्रति कथित है—

सुलभाः पुरुषा राजन् सततं प्रियवादिनः।
अप्रियस्य तु पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥

"राजन्! सदा प्रिय वचन बोलने वाले मनुष्य तो सहज में ही मिल सकते हैं किन्तु जो अप्रिय होता हुआ भी हितकारी हो, ऐसे वचन के वक्ता और श्रोता दोनों ही दुर्लभ हैं।"

इस श्लोक-पुष्प को मानसकार ने निम्न चौपाई-माला में गूंथा है—

प्रिय बानी जे सुनहिं जे कहही।
ऐसे नर निकाय जग अहहीं॥
बचन परम हित सुनत कठोरे।
सुनहिं जे कहहिं ते नर प्रभु थोरे॥

रोगी को औषधि एवं पथ्य नहीं भाते। वैसे ही रावण व धृतराष्ट्र को हितोक्तियाँ अन्यथा ही प्रतीत हुईं। रावण को अनेकों ने कर्णकटु होते हुए भी कल्याणकारी वचन कहे। किन्तु चाटुकार मण्डली ने उसकी मति को विकृत कर अहंकार में मदमस्त बना सुपथ-च्युत कर दिया।

धृतराष्ट्र को भी अच्छी-बुरी सुनाने में कसर न रखी गई। परन्तु पुत्र-मोह ने उसकी बुद्धि को कुंठित कर हिये की आँख भी फोड़ दी। उसने विदुर के वचनों को परिणाम में हितकर तथा बुद्धिमानों द्वारा अनुमोदित स्वीकार भी किया। तदपि अन्ततः उसके मुख से यही उच्चारित हुआ—न चोत्सहे सुतं त्यक्तुं अर्थात् मैं अपने बेटे का त्याग नहीं कर सकता।

प्रियवादियों के श्रवण सुखद वचनों में सुध-बुध खोने वाले अविवेकी रावण ने तथा प्रमादी धृतराष्ट्र ने हितोप-

(शेष पृष्ठ ३० पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—कु० आशा

वह निर्भीक छात्र

पुण्य भूमि भारत उन दिनों ब्रिटिश राज्य सत्ता की दासता की शृंखला में आबद्ध था। गुरुकुल कांगड़ी में उन दिनों ग्रीष्मावकाश था। गुरुकुल के अनेक छात्र छुट्टियां बिताने के लिए धर्मशाला गए हुए थे। धर्मशाला की जलवायु उत्तम समझी जाती है। उन दिनों वहां अंग्रेज सैनिकों की छावनी थी। एक दिन प्रातःकाल गुरुकुल कांगड़ी के कुछ छात्र घूमने जा रहे थे। उन्होंने देखा कि सामने से कतिपय अंग्रेज अश्वारोही आ रहे हैं। जब वे समीप आ गए तो छात्रों ने सड़क से एक ओर हटकर उन्हें मार्ग दे दिया। किन्तु तभी एक गोरा सैनिक मुख्य मार्ग से हटकर एक छात्र के समक्ष आ पहुँचा। उसका घोड़ा इतना निकट था कि उस छात्र के शरीर को छूने लगा। गोरे सैनिक की यह धारणा थी कि यह छात्र डर कर या तो भाग खड़ा होगा अथवा धरती तक झुककर उसे प्रणाम करेगा। किन्तु ऐसा कुछ भी न हुआ और वह छात्र अपने स्थान पर अडिग खड़ा रहा। इस पर गोरा सैनिक क्रोध से बिफरता हुआ बोला 'ए ब्वाय! सलाम करो।'

किन्तु इस छात्र ने बड़ी ही निर्भीकता के साथ उत्तर दिया 'क्यों? तुम्हें सलाम क्यों करूं?'

इस छात्र के मुख से यह वाक्य सुनते ही गोरा सैनिक उत्तेजित हो उठा और उसने घोड़े को कुछ और आगे बढ़ाते हुए अंग्रेजी भाषा में कहा—

'तुम्हें चाहिए कि प्रत्येक अंग्रेज को प्रणाम करो।'

निर्भीक छात्र अपने स्थान पर अविचल खड़ा रहा और नितान्त शान्त मुद्रा में बोला—

'ऐसा कोई कानून नहीं है कि जिसके अन्तर्गत हमें कोई प्रणाम करने पर बाध्य कर सके।'

अब इस अंग्रेज सैनिक के समक्ष दो ही मार्ग थे या तो वह अपने अश्व को उस छात्र के ऊपर चढ़ाए अथवा अपनी हार स्वीकार कर ले और अपना रास्ता ले। कुछ क्षण तक न तो सैनिक ने ही अपना घोड़ा हटाया और न ही वह छात्र अपने स्थान से टस से मस न हुआ। और अंत में खीझकर गोरा सैनिक ही यह कहते हुए आगे चल दिया 'टुम हमें सलाम नहीं किया, हम टुम्हें देख लेगा।'

जानते हैं, यह निर्भीक छात्र कौन था। यह थे अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के सुयोग्य पुत्र एवं शिष्य पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति जो बाद में एक नितान्त निर्भीक साहित्यकार पत्रकार तथा नेता के रूप में सारे भारत में विख्यात हुए।

—मैथिली शरण गुप्त

जिस ओर देखेंगे, हमारे चिह्न दर्शक पाएंगे

जो पूर्व में हमको अशिक्षित या असभ्य बता रहे,
वे लोग या तो अज्ञ हैं, या पक्षपात जता रहे।
यदि हम अशिक्षित थे, कहें तो सभ्य वे कैसे हुए?
वे आप ऐसे भी नहीं थे, आज हम जैसे हुए!

× ×

ज्यों-ज्यों प्राचीनता की खोज बढ़ती जाएगी,
त्यों-त्यों हमारी उच्चता पर ओज चढ़ती जाएगी।
जिस ओर देखेंगे हमारे चिह्न दर्शक पायेंगे,
हम को गया बतला , जब जो जहां तक जायेंगे॥

× ×

पाए हमीं से तो प्रथम सबने निखिल उपदेश हैं,
हमने उजड़ कर भी बसाए, दूसरे बहु देश हैं।
यद्यपि महाभारत समर था, मरण भारत के लिए,
यूनान जैसे देश फिर भी सभ्य हमने कर दिए।

× ×

हमने बिगड़ कर भी बनाए जन्म के बिगड़े हुए,
मरते हुए भी हैं जगाए मृतक तुल्य पड़े हुए।
गिरते हुए भी दूसरों को हम उठाते ही रहें,
घटते हुए भी दूसरों को हम बढ़ाते ही रहें॥

(शेष पृष्ठ २६ का)

देशों की सर्वथा अवहेलना की। उसके परिणाम सर्वविदित ही हैं।

निष्कर्ष यह है कि चिकनी-चुपड़ी कहने व सुनने वालों का अधिकतः विनाश अवश्यम्भावी होता है इसके विपरीत यद्यपि कठोर तथापि हितकारी वचन के वक्ता व श्रोता की बहुलता में सुधार होता है। शुभ पथ प्रशस्त होता है। रावण धृतराष्ट्र को लक्ष्य कर परमार्थवादी एवं दूरदर्शी मनीषियों ने यह एक महन् मंगलकारी उपदेश प्रसारित किया है।

उपदेश के अभिप्रेत अर्थ को सम्यक् रूप से समझना अपेक्षित है। शब्दार्थ को नहीं वरन् गूढ़ार्थ को ग्रहण करना समीचीन है।

अतः मनुष्य सदा हितकारक वचन का आसक्त बने न कि मात्र चित्ताकर्षक का। कल्याणकारी कटूक्ति का भी हृदय से स्वागत करे। वक्ता को शत्रु भाव से नहीं, मित्र-भाव से देखे। उसका उपकृत हो। सुधार की अपेक्षा संहार का वरण न करे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

विचार प्रवाह —वचनेश

शायद अब आत्माएं....

विचित्र उलझन से ग्रस्त है मेरा बेचारा मन। मेरे पास भी कभी था प्यार का एक पक्षी किन्तु समय की बलिहारी है कि वह घृणा के पिंजरे में बन्दी होकर रह गया। शनैः शनैः भूख उसे सताती और सुखाती रही और अंततोगत्वा वह घड़ी भी आ गई कि जब उस बेचारे ने दम तोड़ दिया।

कभी मेरे पास भी थी क्षमा की एक सतत प्रवाहिणी अजस्र सरिता। किन्तु आज मैं उससे वंचित हूँ, क्योंकि किसी क्रोधी अगस्त्य ने चूस-चूस कर समूचा ही निगल लिया और आज मैं क्षमा से सर्वथा रीता हो गया हूँ।

और मुझे स्मरण हो आता है वह समय भी जब कभी मेरे पास भी शान्ति का साम्राज्य था। किन्तु स्वार्थ के एक सम्राट् ने मेरे इस साम्राज्य पर छद्म वेश में धावा बोला और इसके चप्पे-चप्पे को निगल लिया।

वे भी दिन थे जब मैं भी अहिंसा की एक आत्मा का स्वामी था। किन्तु समय ने करवट ली और हिंसा के क्रूर हाथ ने उस अहिंसा की आत्मा को सत्य की समाधि में जीवन ही दफन कर दिया है।

और इस सर्वथा परिवर्तित परिस्थिति में रह-रहकर मानस पटल पर एक ही बोझिल प्रश्न उभर उठता है कि क्या आत्मा की अमरता का वह शाश्वत सिद्धान्त अब थोथा सिद्ध हो रहा है।

किन्तु शंका, आशंका और कुशंका के इस घटाटोप में जब-जब यह बात मानस पटल पर उभरती है कि शायद अब आत्मा अमर नहीं रही हैं, तभी हृदय के किसी कोने से एक मन्दर स्वर स्वतः उभरता है कि, नहीं, नहीं, यह असम्भव है।

फिर वर्तमान अवस्था का कारण क्या है? इसका उत्तर यही सूझता है कि मैंने दूसरों पर तो विश्वास किया किन्तु आत्मविश्वास से वंचित होता गया। अंतर्मन इस उलझन का एक ही निदान बता रहा है उत्तिष्ठत जाग्रत। उठ! और जाग! काश! मैं जाग जाऊँ। ★

संस्थान के नए प्रकाशन

१ आर्याभिविनय
काव्यमय व्याख्या सजिल्द २.५०
अजिल्द १.५०।

◆

२ वैदिक गृहस्थाश्रम : सजिल्द
पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड
मूल्य ६ रु०

◆

३. वैदिक गीता (पद्यानुवाद)
मूल्य १ रु०

◆

४. दयानन्द चित्रदर्शन
मूल्य २० रु०
किन्तु प्रचार के लिए
अभी मूल्य १५ रु०

◆

५. संस्कार विधिः
राज संस्करण बड़ा साइज, कपड़े की जिल्द
मूल्य ६ रु०
सादी जिल्द, मूल्य ५ रु०

◆

शीघ्र मंगाइए
दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-११०००५

तनिक आप भी हंसिए

एक महिला मोटर की चपेट में आ गई। मामला अदालत में पहुँचा वहां बचाव पक्ष के वकील ने कहा 'हुजूर, चालक का अपराध नहीं हो सकता वह तो एक अनुभवी चालक है और गत १५ वर्ष से सड़कों पर कार चला रहा है।

इस पर वादी पक्ष के वकील ने कहा 'श्रीमान् तब तो महिला की गलती भी कदापि नहीं हो सकती। क्योंकि वह भी तो पूर्ण रूप से अनुभवी है और गत चालीस वर्ष से सड़कों पर पैदल ही चलती आ रही है।

× ×

शिक्षक : बताओ दृढ़ता और दुराग्रह में क्या अंतर है?
शिष्य : गुरु जी! यदि दृढ़ता का गुण हम में हों तो वह गुण कहा जायेगा और यदि वही गुण किसी अन्य व्यक्ति में हो तो हम उसे दुराग्रह कहेंगे।

× ×

—कल एक जेबकटर ने मेरी जेब पर हाथ साफ कर दिया, किन्तु मेरा सौभाग्य ही था कि कोई नुकसान नहीं हुआ भाई! और इसके लिए मेरी पत्नी को ही श्रेय प्राप्त है।
"वह कैसे भाई साहब?"
"जी! उसने पहली तारीख की रात में ही मेरी जेब से सारे रुपये निकाल लिए थे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(शेष पृष्ठ २९ का)

को आवाज लगाई, 'भाई भीकमसिंह जी ! अरे भाई धर्मसिंह जी !!'

तीनों सिपाही चौंक कर ठहर गए और आश्चर्य-चकित होकर जोरावरसिंह को देखने लगे। जोरावर को पहचानते ही उनके चेहरे हर्ष से खिल उठे।

भीकमसिंह बोल उठा, 'वाह ! वाह ! भला किसे आशा थी कि तुम यहां मिलोगे। आज प्रत्येक डोगरा सैनिक की जबान पर तुम्हारे राजपूती स्वाभिमान और आन की ही चर्चा है, जोरावर ! जब तुम उन अधिकारियों की हत्या करके भाग निकले थे तभी हमने भी चाहा कि हम सेना से निकल भागें। क्योंकि हमें पता था कि सेनानायक हमारे त्याग-पत्र स्वीकार नहीं करेगा, अतः सावधानी की दृष्टि से हमने सेना में कुछ और दिन ठहरने का निश्चय कर लिया। क्योंकि हमें यह भी समाचार मिल गया था कि तुम सकुशल लम्बागिरां के राजा के यहां पहुंच गये हो। परन्तु फिर हमें विदित हुआ कि लम्बागिरां के राजा पर दबाव डालकर सिख सेनानायक तुम्हें बन्दी बना लेने में सफल हो गया है। उसके बाद तो हमारे लिए सेना में रह पाना कठिन हो गया और हमने एक रात अवसर पाकर अपने हथियारों समेत सेना से पलायन कर दिया। हम तुम्हारे हथियार और वस्त्र भी अपने साथ ही ले आए हैं। किन्तु भाई, यह तो बताओ कि तुम देहरा गोपीपुर के दुर्ग से निकलने में कैसे सफल हो पाए।'

'रात को पहरे वालों की दृष्टि बचाकर दुर्ग के बुर्ज पर चढ़ा और नीचे बहती हुई व्यास नदी में छलांग लगा दी !'

'शाबास जोरावर ! तुम वीर ही नहीं अदम्य साहसी भी हो।'

दूसरा बोला 'तुम से हमें ऐसी ही आशा थी। हमें विश्वास था कि वह तुम्हें अधिक समय तक बन्दी बनाए रखने में सफल न हो पाएंगे।'

जोरावर ने पूछा, 'भाई ! यहां तो पकड़ लिए जाने का कोई भय नहीं।'

'यहां इतनी दूर ! हमारा अनुमान है कि यहां उनमें से कोई भी न आ पाएगा।'

'तो भैया, मुझे कृपया सूखे कपड़े दे दो और कहीं से थोड़ी सी सूखी लकड़ियां इकट्ठी करके आग ही जला दो। मेरा सर्दी और थकान से बुरा हाल हो रहा है। जब तक कुछ घड़ी विश्राम न कर लूंगा मैं तो दो पग भी आगे न धर पाऊंगा।'

'हमारे पास कुछ सूखी लकड़ियां और थोड़ा-सा भोजन भी है। तुम उस समतल पत्थर पर कम्बल ओढ़ कर लेट जाओ, हम अभी आग जलाए देते हैं। यदि कहीं से थोड़ा दूध मिल जाता तो अच्छा रहता।'

जोरावर ने बिस्तर ले लिया और उसमें से सूखे कपड़े और कम्बल निकाला। उसने वस्त्र पहने और कम्बल ओढ़ कर बैठ गया। वह भयंकर शीत, जिससे उसने व्यास की शीतल लहरों, रात भर की यात्रा के दौरान हुई घनघोर वर्षा के दौरान अपने सुदृढ़ मनोबल के सहारे टक्कर ली थी अब धीरे-धीरे दूर भागने लगा था।

तभी उन सैनिकों ने आग भी जला दी और उधर पहाड़ी पर से सूर्य की किरणें भी जीवन में आशा की सन्देश-वाहिकाओं के तुल्य उभर आयीं। किरणें जोरावर के शीत-ग्रस्त शरीर पर पड़ रही थीं और वह भी जलती हुई अग्नि के समीप ही लेट गया था।

डोगरा सिपाहियों में से दो ने जोरावर के पैर और भुजाएं दबानी आरम्भ कर दीं और उसके मना करने पर वह बोल उठा 'जोरावर ! इसमें सकुचाने की कोई बात नहीं। वस्तुतः तुमने एक शानदार कारनामा कर दिखाया है। तुम तो हम सबके लिए प्रेरणा प्रदाता बन गए हो। दुःख सुख में भी हम यदि एक दूसरे के काम न आ पाएं तो फिर हम में और पशुओं में अन्तर ही क्या रह जाएगा ?'

दूसरा सिपाही उठा और उसने जोरावर के भीगे हुए वस्त्र एक झाड़ी पर सूखने के लिए फैला दिए और धर्म सिंह अपना खाना निकालकर आग पर गर्म करने लगा।

जोरावर के पास जो दो रोटियां थीं, उन्हें भी आग पर गरमा लिया गया और फिर इन सब ने मिलकर उन गिनी चुनी रोटियों को ही आम के अचार और गुड़ के साथ खाया। आज उन्हें ये रूखीसूखी रोटियां षट्रस व्यंजनों से भी कहीं अधिक स्वादिष्ट लग रही थीं। भोजन करने के उपरान्त वे सभी एक वृक्ष के नीचे लेट गए। अब तक जोरावरसिंह भी शीत की पकड़ से काफी सीमा तक मुक्ति प्राप्त कर चुका था।

'कितने दुर्भाग्य की बात है,' वह एक ठण्डी सांस लेकर बोला, 'कि सिखों और हिन्दुओं में यद्यपि एक ही रक्त प्रवाहित हो रहा है, फिर भी कुछ लोगों के मन में कैसी विचित्र भावनाएं घर कर गयी हैं। वस्तुतः सिख पंथ के वन्दनीय गुरुओं ने तो हिन्दुत्व की रक्षार्थ अपना ही नहीं अपितु अपने परिवारों तक का बलिदान चढ़ा देने में भी संकोच नहीं किया किन्तु दुर्भाग्य से आज उन्हीं के अनुयायियों में एक ऐसा वर्ग भी उभर उठा है जो हिन्दुओं के विरुद्ध घृणा का प्रचारक बन रहा है और शाखा को वृक्ष से काटने का ही प्रयास कर रहा है।'

'इतना सब हो जाने पर भी तुम सिखों के प्रति अपने हृदय में सद्भावना रखते हो जोरावर ! यदि तुम इस प्रकार अदम्य साहस का आलम्बन ग्रहण कर देहरा गोपी पुर के दुर्ग से न निकल भागते तो वे उसी दुर्ग अथवा लाहौर ले जाकर तुम्हें फांसी ही देते।'

'सच कहते हो परन्तु…।'

भीकमसिंह बीच में ही बोल उठा, 'सिख हजार हिन्दुओं के भाई सही, परन्तु जब सिख अपने भाइयों पर धौंस जमाएँ, उन्हें दबाएँ और अपने से तुच्छ और निम्न समझने लग जाएँ तो क्या किया जाय। यदि एक सगा भाई दूसरे की धरती अथवा सम्पत्ति दबाता है और अकारण ही उसे बुरा भला कहता है तो दूसरे को भी तो अपना सम्मान और सम्पदा बचाने के लिए हाथ पैर तो मारने ही पड़ते हैं। सिखों की यह कैसी भ्रातृ-भावना है

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कि वे छोटे-छोटे पर्वतीय राजाओं पर चढ़ाई कर उन्हें ही अपना सामन्त बनाने और उनसे कर वसूल करने लगे हैं। न कांगड़ा इन से बचा है न नालागढ़। न सुकेत, न मंडी, और न जम्मू और न किश्तवाड़। सिखों के काश्मीर को जीतने के सम्बन्ध में तो यह कहा जा सकता है कि उन्होंने इसे पठानों की पराधीनता से स्वतन्त्र कराकर राष्ट्र की सेवा की है, किन्तु हिमालय के इन छोटे-छोटे राजाओं को परास्त करने के पीछे कौन-सी बन्धुत्व भावना और देश-प्रेम उजागर हो रहा है।'

'तो अब तुम्हारा कहां जाने का विचार है ?'

'भाई, दूसरा कोई चाहे मेरा साथ दे अथवा न दे, मेरा तो निश्चय है कि मैं जुगरी के राजा मियां डीडू के पास चला जाऊँ जो महाराजा रणजीतसिंह के पर्वतीय राजाओं को दबाने और कुचलने के कृत्य पर क्षुब्ध और दग्ध हुआ बैठा है। हम सिखों की 'हिन्दू शत्रुता' का आस-पास के राज्यों में भी प्रचार करेंगे और एक विशाल पर्वतीय वाहिनी खड़ी करके रणजीतसिंह के साम्राज्य विस्तार को रोकने के लिए एक अभेद्य प्राचीर खड़ी कर देंगे। यदि मेरा वश चले तो मैं एक सुविशाल सेना गठित कर तत्काल लाहौर पर ही आक्रमण कर दूं। भगवान् की सौगन्ध ! उनके दुर्व्यवहार से मेरी छाती में फफोले पड़ गए।'

भीकमसिंह के नेत्रों में प्रतिशोध के अंगारे बरस रहे थे।

'हूं !' जोरावर सिंह ने एक ठंडी सांस ली।

पहाड़ी नरेश एक संयुक्त कमान के नीचे संघर्ष करना भूल गए हैं। जो भी उठता है उन्हें दबा लेता है। अन्यथा मांधाता और ललितादित्य भी तो पर्वतीय राजा ही थे, जिनके साम्राज्य आधे हिन्दुस्थान से लेकर मध्य एशिया तक विस्तीर्ण थे। परन्तु न अब पर्वतीय पुरुषों में साहस रहा है और न महिलाओं में ही स्वाभिमान।

तभी बाँस के झुण्ड के पीछे से सहसा ही एक आकृति प्रकट हुई। ये चारों चौंककर उसकी ओर देखने लगे। यह कोई सैनिक नहीं अपितु विद्वान् ब्राह्मण प्रतीत होता था। जैसे कि राजपुरोहित हो अथवा किसी विशाल मठ का महन्त। उसके हाथ में कमण्डल था और पीठ पर एक छोटी सी गठरी। जोरावरसिंह ने उसे पहचानने की चेष्टा की।

'जोरावर।'

'प्रणाम ! पंडित जी।'

यह वही ब्राह्मण था, जिसे एक एक दिन जोरावरसिंह ने रघुनाथ मन्दिर में पुजारियों के दुर्व्यवहार से बचाया था।

'तुम अनुचित पग उठा बैठे हो।'

'महाराज ! जो विधाता को स्वीकार हो वही होता है।'

'अब दुबारा अनुचित पग न उठाना। वह है जुगरी के राजा के यहाँ जाकर नौकरी।'

'आप हमें जुगरी जाने को क्यों रोकते हैं पंडित जी!' भीकमसिंह ने पूछा।

'अच्छा तुम ही बताओ कि तुम वहाँ किस लिए जाना चाहते हो ?'

'सिखों की शक्ति को तोड़ने के लिए ताकि उनके अन्याय समाप्त हो सकें।'

'तुम ऐसा न कर सकोगे। गुरु नानक द्वारा लगाए गए पौदे को उखाड़ने में किसी सिपाही अथवा शासक का साहस नहीं कि उखाड़ पाए। किसी साधु की कीर्ति को कोई साधु अथवा तपस्वी ही क्षीण कर सकता है। औरंगजेब, फर्रुखसियर और मीर मन्नू ने यह प्रयास कर देखा है। हाँ, यदि मियां मीर और चिश्ती अजमेरी इस ओर ध्यान देते तो अवश्य कुछ कर सकते थे। परन्तु जगत नियन्ता का साक्षात्कार कर लेने वाले इन 'वलियों' को संसार के झमेले में पड़ने की आवश्यकता ही क्या थी। उल्टे मियाँ मीर ने तो अमृतसर में सिखों के हरि मन्दिर की आधार-शिला ही रखी थी।'

'परन्तु जब गुरु नानक सरीखे शान्ति के प्रणेता के नामलेवा ही पर्वतीय जनता के शान्त जीवन में अशान्ति का विष घोलने को सक्रिय हो उठे हों और उस महान् संत की कीर्ति के ध्वजा-धारी ही जनता का गला घोंटने लगे तो आप ही बताइए कि क्या किया जाए।'

'तुम्हारी इन भावनाओं का भी आधार अवश्य ही है। परन्तु परिस्थिति अपने आप सुधर जायेगी। अपने राज्य का प्रसार तो प्रत्येक शासक ही स्वाभाविक रूप से चाहता है। किन्तु महाराजा रणजीतसिंह अथवा उनकी सेना हिन्दुओं की शत्रु है, इस भ्रान्ति को तुम्हें कदापि अपने हृदय में न पनपने देना चाहिए। उनकी सेना में कतिपय गलत व्यक्ति हो सकते हैं किन्तु वे हैं आटे में नमक के समान ही।'

'परन्तु चुटकी भर विष तो मन भर दूध को भी विषैला बना देता है।'

'सत्य है, परन्तु……'

'परन्तु क्या विप्रवर !'

'विश्वास रखो कि इनसे हिन्दुओं का कुछ भी न बिगड़ेगा। तुम्हें स्मरण रखना चाहिए कि विशाल हिन्दू धर्म रूपी वृक्ष से निकला हुआ कोई भी मत, पंथ अथवा सम्प्रदाय हिन्दुओं का शत्रु बनेगा तो स्वयं समाप्त हो जाएगा। इस सम्बन्ध में बौद्धों के इतिहास को स्मरण रखना चाहिए। एक समय था जब भारत के सैंकड़ों राजा और सामन्त बौद्ध बन गए थे। प्रायः सारी जनता भी बौद्ध मत ग्रहण कर चुकी थी। वैदिक धर्मी तो कोई बिरला ही दिखाई देता था। किन्तु आज तुम स्वयं देख सकते हो कि भारत में बौद्ध मतावलम्बी कितने हैं। वैदिक धर्म में आई कुरीतियों को दूर करने के लिए भगवान् गौतम बुद्ध ने जिस बौद्ध मत का प्रतिपादन किया था, जब उसके अनुगामियों ने वैदिक मान्यताओं के मूल पर ही कुठाराघात आरम्भ कर दिया तो उसका पराभव हो गया। शंकराचार्य और रामानुजाचार्य के प्रचार के समक्ष वे न ठहर सके। आवश्यकता पड़ने पर हिन्दू जाति पुनः ऐसे ही प्रातःस्मरणीय आचार्यों को जन्म देगी। अतः तुम क्यों राष्ट्र-भक्ति के नाम पर उदीयमान इस शक्ति से टकराकर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बदनामी मोल लेना चाहते हो ? आज इनमें घृणा द्वेष की जो भावना सिर उठा रही हैं, यदि इसका इन्होंने स्वत: दमन न किया तो महाराजा रणजीतसिंह के निधन के उपरांत यह स्वयं इन्हीं को ग्रसने लगेगी। उस स्थिति में इनकी घृणा और पृथकतावादी मनोवृत्ति से विक्षुब्ध वही हिन्दू जाति इनके सहयोग से हाथ खींच लेगी जिसने इन्हें वैभव के शिखर पर आरूढ़ होने में सहायता प्रदान की है। ये लोग आपस में टकराकर ही अपने गौरव और वैभव को तिरोहित कर देंगे और फिर एक नई विदेशी शक्ति जो इनसे अधिक सुसंगठित और राजनीति निपुण है इनके वैभव को निगल लेगी।'

ब्राह्मण ने दीर्घ श्वास ली और बोला—

'इसीलिए मैं कहता हूं कि जुगरी जाना तुम्हारे लिए लाभदायक सिद्ध नहीं हो सकता। मियां डीडू के ग्रह भी उसके अनुकूल नहीं हैं। उसे भी शीघ्र ही पतन का मुख देखना पड़ेगा। अत: तुम्हारे लिए यही उचित होगा कि तुम यहां से जाकर राजा गुलाबसिंह की सेना में भर्ती हो जाओ। नि:सन्देह यह डोगरा राजा अभी महाराजा रणजीतसिंह के अधीन है परन्तु दैव का यही निश्चय है कि वह शीघ्र ही स्वतन्त्र हो जायगा और उसके नेतृत्व में डोगरों को पुन: वैभव और गौरव प्राप्त होगा, जोरावर ! अत: रणजीतसिंह की सेना के संकीर्णमना तत्व से उलझने की चेष्टा न करो। उनके कुकृत्य स्वत: ही उनसे निपट लेंगे। परमात्मा को तुम्हारी किसी अन्य दिशा में आवश्यकता है।'

ब्राह्मण के मुख से ये शब्द इस प्रकार निकल रहे थे मानो वह कोई भविष्यवाणी कर रहा है।

भीकमसिंह ने सोचा कि यह सिखों का ही कोई जासूस है जो उन्हें सिखों के परम विरोधी मियां डीडू की नौकरी से रोकना चाहता है।

वह ब्राह्मण जोरावरसिंह के पास बैठता हुआ बोला 'सद्मार्ग से भटके हुए कतिपय सिखों के दुर्व्यवहार के कारण तुम्हें सम्पूर्ण सिख सम्प्रदाय के प्रति ही विरोध की भावना को अपने हृदय में स्थान नहीं देना चाहिए, जो हिन्दुओं के पसीने के स्थान पर अपना रक्त बहाने को तैयार हैं। सिख गुरुओं की भी हिन्दू जाति चिर-ऋण रहेगी।'

उसने अपने कमंडल में से दूध एक अन्य लोटे में उलटा और जलती हुई लकड़ियों में गर्म होने के लिए रख दिया। उसने अपनी गठरी में बंधी मिठाई भी खोली और बोला—

'मैंने तुम्हें कहा था कि जहां भी तुम्हें मेरी सहायता की आवश्यकता होगी मैं अवश्य पहुंचूंगा। मैं एक पर्वतीय गुफा में ध्यानमग्न था। जब तुमने देहरा गोपीपुर के दुर्ग के बुर्ज से व्यास नदी में छलांग लगाई तो मेरा ध्यान भंग हो गया। तुम्हारे साथ इससे पूर्व घटित हुई घटनाओं की भी मुझे पूर्ण जानकारी है। लो, अब तुम थोड़ा-सा दूध पी लो और थोड़ी-सी मिठाई खा लो और फिर यहाँ से जाकर राजा गुलाबसिंह की सेना में भर्ती हो जाओ।'

'मैं तुम्हें एक और सुझाव भी देता हूं कि तात्कालिक लोभ और पद-लिप्सा के प्रलोभन से ऊपर उठकर विशुद्ध देश-भक्ति की भावना से प्रेरणा लेते हुए तलवार कमर में बांधना, यथाशक्य ब्रह्मचारी रहने का प्रयास करना। शत्रु की ओर से चाहे कितना भी प्रबल प्रतिरोध हो किन्तु उनके वृद्धों, बालकों और महिलाओं पर कदापि हाथ न उठाना। जय और पराजय में समान रहना। प्राचीन काल के आर्य वीरों के समान ही प्रात:काल उठ कर प्रार्थना करना कि 'हे प्रभु ! मेरी व्यक्तिगत आकांक्षाएँ भले ही पूर्ण न करना किन्तु मुझे यह वरदान अवश्य देना कि मैं राष्ट्र रक्षा के महान् दायित्व का अपने प्राण रहते निर्वाह करता रहूं और अपनी सम्पूर्ण शक्ति सहित देश की मान मर्यादा की वृद्धि में योग दूं। मुझे दीर्घायु नहीं चाहिए अपितु मुझे शानदार विजय प्राप्त हो अथवा शानदार मृत्यु। तुम विजयश्री का वरण और मृत्यु का आलिंगन एक से ही चाव से करना।'

'दूध गर्म हो चुका है, अब इसे पी लो और यह कमंडल भी तुम अपने पास ही रख लो। मैं तो इसके बिना भी निर्वाह कर लूंगा।'

इतना कह कर वह जैसे आया था, वैसे ही अचानक प्रस्थान भी कर गया।

'कौन था जोरावर्सिंह यह ब्राह्मण ?'

'एक विद्वान् है, जिसे आज से कुछ समय पूर्व मैंने केवल एक बार देखा था।'

'क्या पता कि यह शत्रु का गुप्तचर हो और इसने इस दूध में ही कुछ मिला दिया हो।'

'नहीं, ऐसी कोई बात नहीं हो सकती ! लाओ, सर्व-प्रथम मैं ही दूध का घूंट भरता हूं।'

'अच्छा तो तुम जानो।' धर्मसिंह ने यह कहते हुए गर्म दूध का कटोरा जोरावर की ओर बढ़ा दिया। जोरावर घूंट-घूंट दूध पीने लगा और उसने मिठाई के भी तीन टुकड़े खाए। दूसरों ने भी बारी-बारी से दूध पिया और मिठाई खाई।

धूप की सुखद किरणें पर्वतीय शिखरों पर नृत्य करने में मस्त थीं। वायु में सुगन्धित पुष्पों की बास मिलकर चतुर्दिक् उड़ रही थी। खेतों में भी हरियाली थी और ऐसा लग रहा था कि वे खतरे से बाहर निकल आए थे।

(क्रमश:)

क्या आप ३०१) भेजकर आजीवन सदस्य नहीं बन सकते ?

क्या आप के मन में कभी यह इच्छा नहीं जागती कि आपका भी अपना कोई अच्छा पत्र हो ?

भूलिए नहीं—शताब्दी वर्ष का उपहार जन-ज्ञान साप्ताहिक—आपके सहयोग की राह देख रहा है—कैसे भी दें, पर ३०१) भेजकर हमें आगे बढ़ने में सहयोग दें।

—संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नए आविष्कार

१. पानी के तीव्र प्रवाह से रंग साफ करने वाला उपकरण।
२. जूतों के लिए नये प्रकार के तले।
३. अन्तरिक्ष युगीन इन्सुलेशन का प्रयोग करने वाली भट्टी।

जल के तीव्र प्रवाह से रंग साफ करने वाला उपकरण

'ट्राइटन हाइड्रो-लेसर' ऐसा उपकरण है जो अपनी टोंटी से भारी दबाव के साथ पानी प्रवाहित करता है। इस उपकरण का प्रयोग धातुओं पर से रंग-रोगन या मोर्चा छुड़ाने या उद्योगों में अनेक वस्तुओं की सफाई करने के लिए हो सकता है।

इस उपकरण में मजबूत और टिकाऊ पम्पों का प्रयोग किया जाता है, जो अपने-आप दिन-रात बराबर पानी प्रवाहित करते रहेंगे। इसके नल की खूबी यह है कि वह पानी के जोरदार प्रवाह से फट नहीं सकता। यह उपकरण लगातार एक क्रम से जोरदार पानी का प्रवाह छोड़ कर मकानों, मशीनों, पाइपों, बायलरों आदि पर लगी रंग या गन्दगी की परतों को छुड़ा सकता है। यह प्रति मिनट ७०० गैलन तक पानी प्रवाहित करता है। इसके जल-प्रवाह का दबाव प्रति वर्ग इंच १२ हजार पौण्ड तक होता है।

जिन उद्योगों में हाइड्रो-लेसर का प्रयोग हो सकता है, उनमें धातु, रंग-रोगन, स्वतःचालित यन्त्र, पेट्रोकेमिकल, उड्डयन, औषधि, कंक्रीट, ऊर्जा, खाद्य-संसाधन, फाउण्ड्री, लुगदी और कागज, कांच और सिरामिक्स, परिवहन, रबर, खान आदि शामिल हैं। ब्राजील, फ्रांस, नीदरलैंड, सिंगापुर, स्पेन तथा अमेरिका में इस उपकरण का प्रयोग हो रहा है।

न्यूयार्क की फर्म, फेरेक्स इण्टरनेशनल इन्कारपोरेटेड, इसका निर्यात कर रही है। इस उपकरण को चलाने के लिए हवा, ब्वायलर या हीटर की कोई जरूरत नहीं होती। इसे ट्रेलर, प्लेटफार्म या गाड़ियों पर चढ़ाकर एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाया जा सकता है।

जूतों के लिए नये प्रकार के तले

टैक्सास (अमेरिका) की एक फर्म, स्पेन्सा मेडिकल कारपोरेशन, जूतों के भीतरी तले या अन्दरूनी सोल का निर्माण करने के लिए एक ऐसी सामग्री का विक्रय कर रही है, जो बहुत टिकाऊ है और आसानी के साथ धो कर साफ की जा सकती है। इसके द्वारा निर्मित जूते का भीतरी तला जूते और पांव के चर्म के संघर्षण को रोकता है और इस प्रकार पांव में बिवाई नहीं फटने पाती।

निर्माता फर्म का कहना है कि उसके द्वारा निर्मित तलों वाले जूतों का प्रयोग अमेरिका में बास्केटबाल, फुटबाल और टेनिस खेलने वाले खिलाड़ी कर रहे हैं। ये तले नियोप्रीन से बनाये जाते हैं। कम्पनी द्वारा नियोप्रीन की चद्दरें तैयार की जाती हैं, जिन्हें काट कर हेलमेट, आदि में प्रयुक्त किया जा सकता है।

अन्तरिक्ष युगीन इन्सुलेशन का प्रयोग करने वाली घरेलू भट्टी

अन्तरिक्ष युग की ताप उत्पादक और इन्सुलेटिंग सामग्रियों का प्रयोग करके एक नये प्रकार की हल्की विद्युत् चालित भट्टी का निर्माण किया जा रहा है, जिसके द्वारा घर पर ही कोई भी व्यक्ति शौकिया तौर पर सिरामिक्स, इनेमिल कापर या कांच को पका या सेंक कर उनसे नयी-नयी आकृतियां या आकार वाली वस्तुएं बना सकता है।

इस घरेलू भट्टी का नाम 'नोवा' है। इसका निर्माण करने में एक नये प्रकार का इन्सुलेशन प्रयुक्त होता है। इसका प्रयोग करने में 'नोवा' में बिजली का खर्च बहुत ही कम होता है। इस उपकरण का वजन केवल १२ पौंड है। निर्माताओं का कहना है कि इसे एक जगह से दूसरी जगह आसानी से ले जाया जा सकता है। यह दो खोलों से बना होता है, जिसके फलस्वरूप असली भट्टी और उसके ऊपर की खोल के बीच हवा गुजरती रहती है। इससे ऊपरी खोल काफी ठण्डी बनी रहती है। यही कारण है कि जब भीतरी भट्टी का तापमान बढ़ कर २,१५० अंश फारेनहाइट तक पहुंच जाता है, उस समय भी इसकी ऊपरी खोल को आसानी से स्पर्श किया जा सकता है।

'नोवा' के ताप को बढ़ा कर १५ मिनट में इतना ऊँचा किया जा सकता है, जिससे वह कांच को पिघला सके।

इसका निर्माण सान्ता एना, कैलिफोर्निया की फर्म थर्मोलाइन-साइब्रोन कारपोरेशन कर रही है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कु० आभा

बाल कथा

परमात्मा न्यायकारी है !

कहानी बड़ी पुरानी है। एक था बेचारा ग्रामीण। ग्राम में रोजगार न रहा तो उसने किसी नगर में जाकर कोई काम धंधा खोजने के लिए जाने का निश्चय कर लिया। कई दिन के सोच विचार के उपरान्त ही किया था, उसने यह फैसला। अतएव एक दिन घर से दो रोटियां एक पोटली में बांध कर शहर की ओर चल दिया। शहर था ग्राम से बहुत दूर। चलते-चलते दोपहरी भर गई। धरती तवे सी तप रही थी तो सूर्य की प्रखर किरणों के कारण उसका सिर भी तपने लगा था और उधर भूख भी थी, जो जोर मार रही थी। जब एक घने जंगल में पहुंचा तो उसने देखी पास में ही बहती हुई एक जलधारा। उसने पहले पेट की भूख बुझाने के लिए अपनी पोटली खोलकर दो रोटियां खाई और फिर जलधारा से ठंडा पानी पीकर प्यास बुझाई।

चलते चलते हुई थकन और भारी गर्मी एवम् धूप की तपन से कुछ देर विश्राम कर लेने को हुआ उसका मन। उसने एक वृक्ष की छाया तले कुछ देर लेट कर विश्राम करने का विचार बनाया। और अपनी पोटली को सिर के नीचे रखकर वह लेट गया। तभी उसका ध्यान समीप ही फैली एक बेल पर गया। जिस पर एक-एक मन के सीताफल लगे हुए थे।

कुछ ही देर बाद उसने जब ऊपर की ओर निहारा तो उसे वृक्ष पर लगे छोटे-छोटे फल दिखाई दिए। यह वृक्ष था गूलर का। हठात उसके मन में विचारों का प्रवाह तीव्र हो उठा। वह मन ही मन सोचने लगा कि परमात्मा भी कैसी विचित्र और बेढब रचना रचता है। इतने बड़े और घने इस गूलर के वृक्ष पर तो लगाया है 2-2॥ तोले का ही फल और मामूली सी बेल पर एक-एक मन का सीताफल। उसे परमात्मा के न्याय में शंका-कुशकाएं होने लगी। विचारों की इसी उधेड़ बुन में वह काफी देर तक रहा। धीरे-धीरे थकान के कारण वृक्षों की ठण्डी बयार ने उसे झपकी ला दी और वह सो गया।

अभी उसे निद्रा की गोद में गए कठिनाई से 10-15 मिनट ही गुजरे थे कि अचानक ही एक गूलर हवा के झोंके से वृक्ष से टूटा और सीधे उसकी नाक पर आकर गिरा

गूलर के नाक पर गिरते ही उस ग्रामीण की आंख खुल गई और उसे नाक मे हल्की सी पीड़ा भी अनुभव हुई। वह तत्काल उठ बैठा। और फिर उसके मन में विचार आया कि यदि परमात्मा ने कहीं मेरी कल्पना के अनुसार इस विशाल वृक्ष पर एक-एक मन के फल उगाए होते और मैं इसी प्रकार इस वृक्ष के नीचे आकर सोता तथा जैसे यह गूलर सोते समय मेरी नाक पर टपक कर आ गिरा है, उसी प्रकार वह मन भर का फल मेरे ऊपर आकर गिरता तो फिर मेरी खोपड़ी तो चकनाचूर हो ही जाती मेरे प्राण पखेरू भी उड़ ही जाते।

और फिर उस ग्रामीण को उसके मन ने ही समझाया भोले राही ! प्रभु का प्रत्येक कार्य, उसकी सारी रचना ही उसके विवेक, उसके न्याय व उसके कौशल की प्रतीक है। वह यदि इस वृक्ष पर भारी भरकम फल लगाता तो कोई राहगीर उसकी छाया में विश्राम न कर पाता और यदि कभी भूले से इसके नीचे आकर सो जाता तो अपने प्राणों से भी हाथ धोता। वास्तव में वह प्रभु—वह परमात्मा सर्वथा न्यायकारी है।

कु० ऋचा

छोटे भइया चतुर सुजान

छोटे भइया चतुर सुजान।
मात- पिता का कहना मान ॥
गुरूजनों का कर सम्मान।
सदा निभाओ अपनी आन ॥

नित्य प्रभु का लेकर नाम।
करो शुरू तुम अपना काम ॥
पढ़ो लिखो हो बुद्धिमान।
तुम्हे बढ़ानी जग में शान ॥

कभी झूठ के पास न जाओ।
सदा सत्य को ही अपनाओ ॥
सत्यव्रती बन वीर बनो तुम।
फिर अर्जुन के तीर बनो तुम ॥

देश धर्म हित हो तैयार।
सदा करो आपस में प्यार ॥
दया भाव मन में उपजाओ।
कभी किसी को नहीं सताओ ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

व्यक्ति परिचय

के० रामकृष्णप्पा : आर्य प्रतिनिधि सभा कर्नाटक के नये प्रधान

के० रामकृष्णप्पा जैसे व्यक्ति का कर्नाटक आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रधान चुना जाना वास्तव में सभा के लिए ही नहीं, पूरे आर्य जगत् के लिये सौभाग्य की बात है। रामकृष्णप्पा जी अगरबत्ती के सुप्रसिद्ध व्यापारी हैं। उनका आर्य जीवन व्यापारियों के लिए भी आदर्श है। शुभ लाभ का ईमानदारी व सत्य से कहीं सम्बन्ध दिखाई देता है, तो वह रामकृष्णप्पा जी के वैश्यत्व में, उन्होंने अब ५० लाख रु० का आय कर भरा है, जो आज कर्नाटकीय व्यापारी जगत् के लिए चर्चा व विस्मय का विषय बन चुका है।

के० रामकृष्णप्पा जी ने कर्नाटक विश्वविद्यालय को १ लाख रु० दान प्रदान किया है। विश्वविद्यालय से हुये एक समझौते के अनुसार यह धनराशि वैदिक साहित्य को कन्नड़ में अनूदित करने में लगायी जायेगी। रामकृष्णप्पा जी ने इस बात की गहराई को जाना कि प्रादेशिक अंचलों में आर्य सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार करने के लिए हिन्दी के अतिशय मोह या अंध मोह को छोड़ना होगा। प्रान्तीय क्षेत्रों में प्रान्तीय भाषाओं को स्थान देने पर ही आर्य समाज का प्रचार सम्भव हो सकेगा। महाराष्ट्रीय आर्य समाजों के निर्वाचनों पर एक नजर दौड़ायी जाये, तो यह बात साफ नजर आयेगी कि आर्य समाज की अंतरंग सभाओं में हिन्दी भाषी, पंजाबी, सिन्धी, गुजराती, मारवाड़ी तो नजर आएंगे, पर महाराष्ट्रीय नहीं। सारे संसार को आर्य बनाने की घोषणा करने वाला आर्य समाज केवल हिन्दी भाषा भाषियों तक ही संकुचित-सीमित हो गया है, क्योंकि अहिन्दी भाषी प्रदेशस्थ आर्य समाजी जिस प्रान्त में निवास करते हैं, उस प्रान्त की भाषा से अपरिचित रहते हैं और इसी कारण अहिन्दी भाषी व्यक्ति आर्य समाज के सम्पर्क में नहीं आ पाते और साथ ही आर्यत्व में दीक्षित रहने से वंचित रह जाते हैं। अहिन्दी भाषी प्रदेशों में आर्य समाज के पिछड़ेपन का बहुत बड़ा कारण यही है कि वह वहां की जनवाणी में सोचने-समझने, बोलने-लिखने में असमर्थ रहा है और अपने इस असामर्थ्य पर विजय पाने के लिए उसने प्रयास भी नहीं किया। वह 'कूप मंडूक' बना रहना चाहता है— उड़ीसा, बंगाल, कर्नाटक, आंध्र, महाराष्ट्र आदि प्रदेशों में दयानन्द के सपनों को साकार करने के लिए उड़िया, बंगाली, कन्नड़, तेलगु, मराठी आदि में वहाँ के लोगों की तरह प्रवीण होना होगा— अन्यथा "कृण्वंतो विश्वमार्यम्" की घोषणा धरती पर स्थायित्व पाने की अपेक्षा गगन में ही भटककर विलीन हो जायेगी, जहाँ आर्य सिद्धान्तों के प्रचार की बात उठती है, वहाँ हमें हिन्दी से ज्यादा आर्य सिद्धांत प्यारे हैं और उनकी अभिवृद्धि के लिए हम प्रान्तीय स्तर तक हिन्दी के प्रति उदासीन रहने या हिन्दी की उपेक्षा करने में भी नहीं हिचकिचायेंगे। इन्हीं विचारों में गहरे पैठ कर रामकृष्णप्पा जी ने वैदिक साहित्य को कन्नड़ में अनूदित करने के लिये एक लक्ष रुपये की राशि सहर्ष प्रदान की है, जो अहिन्दी भाषी प्रदेशों में, विशेषतया कर्नाटक में आर्य जगत् के स्वर्णिम भविष्य की सूचक है।

रामकृष्णप्पा जी दधीचि, कर्ण, भामाशाह की परंपरा को अक्षुण्ण बनाये रखने वाले दानवीर हैं। उन्होंने कर्नाटक प्रदेशीय प्रत्येक आर्य समाज में वाचनालयों की शुरूआत व विस्तार के लिए १-१ हजार रु० का दान दिया है। साथ ही साथ यह भी घोषणा की है कि वैदिक धर्म की वैचारिक क्रान्ति की मशाल को प्रज्वलित रखने के लिये जहाँ भी धन की जरूरत होगी, वहाँ मैं सबसे आगे उपस्थित रहूंगा। उन्होंने कार्यकर्ताओं की एक सभा में कहा कि "आप त्याग भाव से काम करते जाइये। धन आपके पीछे अपने आप भागता आयेगा।"

अभी हाल में रामकृष्णप्पा जी ने आर्य समाज बिटगोप्पा को २ हजार व श्यामार्य शिक्षण संस्था उदगीर को 5 हजार रु० का दान दिया है।

रामकृष्णप्पा जी का परिवार एक सुखी आर्य परिवार है। दो पुत्र विदेशों में उच्च शिक्षा के अध्ययन में संलग्न हैं। भगवान् उनके परिवार की दिन-दुगुनी रात-चौगुनी उन्नति करे व सर्वविध सुख प्रदान करे, यही प्रभु से प्रार्थना है।

युवा-शिविर

उदगीर। मराठवाड़ा आर्य युवक परिषद् का बौद्धिक, शारीरिक, यौगिक साधना शिविर 15 मई से 21 मई तक "श्यामलाल स्मारक विद्यालय उदगीर" में मनाया जा रहा है।

सर्वश्री स्वामी सोमानन्द जी (पं० नरेन्द्र जी हैदराबाद), स्वामी सुधानन्द जी, उत्तम मुनिजी वानप्रस्थी, शेषराव जी बाघमारे, डा० चन्द्रभानु जी सोनवणे वेदालंकार, डा० सुग्रीव जी काले, डा० सत्यव्रत जी, प्रधानाचार्य सदाविजय आर्य, प्रधानाचार्य वेदकुमार वेदालंकार, पत्रकार प्रो० देवदत्त जी तुंगार, भजनोपदेशक पं० नरदेव जी स्नेही व पं० विश्वनाथ जी आर्य आदि संन्यासी, वानप्रस्थी, प्रोफेसर, आचार्य व भजनोपदेशक पधार रहे हैं। इन्हीं तिथियों में आर्य समाज उदगीर का वार्षिकोत्सव भी मनाया जायेगा।

—प्रो० कुशलदेव शास्त्री

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—रजनीकांत आर्य

ऐतिहासिक कहानी

प्रायश्चित या प्रतिशोध

★★★

अनेक वर्ष पूर्व रात के 10 बजे थे। चिता के चारों ओर भारी भीड़ लगी थी। बड़े-बड़े लठ्ठ लिए चांडाल घूम रहे थे। चिता चतुर्दिक बैठे ब्राह्मण मंत्र पाठ कर रहे थे। लोग अपनी कन्याओं को खींचते ला रहे थे। कन्याओं का हाथ वह चांडालों को पकड़ाते। चांडाल उनको घसीट कर चिता में डाल देते थे। यदि कोई कोई लड़की चिता से निकलने की चेष्टा करती तो उसे चांडाल लाठी मार कर पुनः अग्नि में ठेल देते थे। 5-5 वर्ष की बाल-विधवाओं को वह उठाकर पटक रहे थे। सम्पूर्ण वातावरण चीख, पुकार, कन्याओं के विलाप से भरा था।

इसी समय महाराज डालचन्द्र के पुरोहित अपनी 16 वर्षीय लड़की शांति देवी को घसीटते हुए लाये। शांति देवी कुछ माह पूर्व विधवा हो चुकी थी। उसका गौना भी नहीं हो पाया था। पुरोहित मण्डन लाल ने एक चांडाल को शांति का हाथ पकड़ा दिया। चांडाल उसे घसीटते हुए चिता में झोंकने चला। इसी समय एक विचित्र घटना घटित हुयी। देखते ही देखते बड़े जोरों की आंधी चलने लगी और वर्षा प्रारम्भ हो गयी। शांति देवी को छोड़कर चांडाल भागा। वह वहीं गिर कर बेहोश हो गयी।

\+ + +

प्रातः काल हो चुका था। वर्षा तथा आंधी बन्द हो गयी थी। उसी समय शांति ने नेत्र खोले। वह वहां से से उठकर किले के नीचे बहती गंगा की ओर चली। और उसने गंगा में छलांग लगा दी।

उसी समय जौनपुर के शाह शर्की के दो गुप्तचर वहां घूम रहे थे। शाह शर्की तथा डलमऊ के महाराज डालचन्द्र में बराबर युद्ध हुआ करते थे। गुप्तचरों ने जब देखा कि एक लड़की ने आत्महत्या के निमित्त छलांग लगा दी है, तो उनमें से एक गुप्तचर तुरन्त गंगा में कूद कर लड़की को निकाल लाया और अपने साथ जौनपुर ले गया।

जौनपुर के दरबार में शाह शर्की के समक्ष शांति को उन्होंने उपस्थित किया। शाह ने उसे धर्मान्तरित कर उसका नाम असगरी बेगम रखा और उसे अपनी बेटी कहकर पुकारा तथा उसका विवाह अपने सिपहसालार जफर हुसैन से कर दिया। कुछ दिनों बाद असगरी बेगम (शांति) को एक पुत्र उत्पन्न हुआ। जिसका नाम लाल मोहम्मद रखा गया।

x x x

20 साल व्यतीत हो चुके थे। अब लाल मोहम्मद शाह शर्की की फौज का सिपहसालार था। शाह शर्की कई बार डलमऊ पर आक्रमण कर चुके थे। अन्त में उन्होंने फाल्गुन की पूर्णिमा की रात को डलमऊ पर आक्रमण करने का निश्चय किया। उनकी पुत्री डलमऊ के राज-दरबार में नर्तकी बन कर सम्पूर्ण भेद उन्हें दे रहीं थी। होली के दिन डलमऊ की सम्पूर्ण सेना एवं जनता शराब पीकर उत्सव मनाती थी।

जब असगरी बेगम को ज्ञात हुआ कि उसका लड़का लाल मोहम्मद भी डलमऊ पर आक्रमण करने जा रहा है, तो उसने लाल मोहम्मद को बुला कर अपने ऊपर हुए अत्याचार बतलाये और कहा—बेटा ! "इन जालिमों को माफ मत करना, मुझ सरीखी सैकड़ों बेकस बेगुनाह औरतों की रक्षा करना उन जालिमों से, मगर बेटा उनको माफ मत करना। जाओ पाक परवरदिगार तुझे फतह दिलाये।"

x x x

फाल्गुन की पूर्णिमा की रात्रि को शाह शर्की ने डलमऊ पर आक्रमण किया। कुछ ही घंटों में सम्पूर्ण सेना मारी गई। महाराज डालचन्द्र भी वीरगति को प्राप्त हो गए।

लाल मोहम्मद एक सैनिक टुकड़ी लेकर सती-चौरा पहुंचा। पहुंचते ही वह चिता के चारों ओर बैठे मन्त्र पाठ करते ब्राह्मणों तथा चांडालों पर टूट पड़ा। ब्राह्मणों में भगदड़ मच गयी वे सब अपनी जान लेकर भागे। लाल मोहम्मद ने कड़क कर कहा—'देखना इन जालिमों में से कोई जिंदा न बचने पाये।'

उसके बर्बर सैनिक टूट पड़े। सबको काटकर चिता में झोंक दिया। लाल मोहम्मद ने विधवाओं को अभय दान दिया। उन विधवाओं ने सहज में ही धर्म परिवर्तन कर लिया। भरों का पतन हो गया। आज भी डलमऊ में होली नहीं जलायी जाती है।

सत्यार्थ-प्रकाश

२००) सैकड़ा—छोटा अजिल्द
२५०) सैकड़ा—बड़ा अजिल्द
३५०) सैकड़ा—बड़ा सजिल्द
५००) सैकड़ा—कपड़े की जिल्द

मंगाएं : बांटें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—दिग्दर्शनानन्द

ढोल की पोल

"कहिए बन्धु सदानन्द । आज क्यों है चेहरे पर सन्नाटा । क्या व्यापार में पड़ गया है घाटा या फिर किसी अधिकारी ने है डाटा । जो मुखड़ा रहता था खिला । आज लगता है उस पर कुछ अजब सा सिलसिला ।"

"जिज्ञासानन्द जी है थोड़ी सी परेशानी । बार-बार मन में आ रहा है विचार । कैसा विचित्र है यह संसार । यहां के बड़े विचित्र हैं खेल । किसी के जीवन की गाड़ी चलती है सरपट पर किसी का इंजन है फेल । इसीलिए तो कहा है किसी ने अजब हैं ये किस्मत के खेल । छछूंदर के सिर में चमेली का तेल । इसलिए हम रहने वाला सर्वदा सानन्द । आज परेशान हैं श्री जिज्ञासानन्द ।"

"तनिक अपनी परेशानी से हमें अवगत कराइए । बता सकते हैं तो अवश्य ही बताइए । क्यों कि बताते हैं सुधिजन की बताने से बंट जाती है परेशानी-घट जाती है घुटन । कर दीजिए कुछ अपनी दुविधा का प्रवचन ।"

"क्या बताऊं भाई जिज्ञासानन्द । बात कुछ है ही ऐसी । न छिपाए बनता है न बताए बनता है । फिर आप तो ठहरे हमारे अभिन्न अतः यह गम का माजरा छिपाएं तो छिपाएं कैसे ?"

"यदि ऐसा समझते हैं तो सुनाइए सदानन्द जी । हालाते हाजरा कुछ बताइए सदानन्द जी । जिज्ञासानन्द ने कहा और फिर सदानन्द जी बोलते गए । एक-एक शब्द तोलते गए और कहा एक परिचित हैं आपके हमारे । कहते हैं स्वयं को आचार्य यद्यपि न कभी किसी पाठशाला में पढ़े और नहीं देखी है किसी गुरुकुल की शक्ल । किन्तु पाई है अनोखी अक्ल ।"

"तो क्या आप उन्हीं के संबंध में कुछ बताना चाहते हैं जो स्वयं को रोग का जी नहीं योग-योगांग का पंडित जताते हैं अपनी ही रंग-बिरंगी मुद्रा अपनी कैंची कृपा दायिनी रचनाओं में प्रकाशित कराते हैं स्वयं को आचार्य कहलवाते हैं ।"

"जी-जी जिज्ञासानन्द जी आप ने ठीक है पकड़ा । उन्हीं की है यह दास्तान हम करते हैं उसका बयान । आपको है पता कुछ वर्ष पूर्व उनकी पांचों थी घी में । मिल गए थे एक औघड़ दानी । जिनके यहां वर्षों इन्होंने मुफ्त की थी छानी और उन्हीं दिनों इनकी काया माया ने एक सज्जन को था गरमाया । उन बेचारों ने इन्हें दो पाए से चतुष्पदी था बनाया'

"हां हां आप तो सदानन्द जी गए थे बारात में उस बहुरूपिये के साथ में ।"

"हां उन्हीं का किस्सा आगे बढ़ा रहे हैं । आप तो जानते ही हैं कि वे सज्जन अशिक्षा पुरी स्थित दम्भकला विश्वविद्यालय के हैं स्नातक । इसलिए हो सकता है इनका विद्या ज्ञान कहां तक । इनका जिस देवी से हुआ विवाह वह है सुशिक्षित-सुसभ्य । किन्तु किस्मत के हैं चमत्कार । ये आचार हीन आचार्य बन गए उनकी किस्मत के कर्णधार ।"

"पर वह तो कई वर्ष पुरानी बात है सदानन्द जी । अतः आप क्यों यह सब स्मरण दिला रहे हैं ।"

जिज्ञासानन्द जी आप सुनते तो जाइए । हमारी इस व्यथा कथा के प्रवाह में अपने वाक्यों का भीमगोडा न अड़ाइए । तो हम आपको रहे थे बता कि ये बन गए उस देवी की भाग्य तरणि के खेवनहार । उनसे खूब लिखाया । अपने नाम से छपवाया । कुछ इधर-उधर की पुस्तकों से उड़ाया । कुछ सीधे साधे लोगों को फंसाया और स्वयं के चित्रों को अपनी कैंची कला की जीती जागती तस्वीरों पर जिन्हें इन्होंने अपनी रचनाओं का पुस्तकों का नाम दिया, छपवाया । किन्तु वह देवी बेचारी इनकी करतूतें देखती रही सारी । उसने सोचा और विचारा । विद्योत्तमा का भाव हृदय में धारा । सोचा कि निरक्षर आचार्य हो जाए कालीदास । किया बड़ा अभ्यास—किन्तु उलटा ही पड़ा हर पाश । उस बेचारी को मिली केवल निराशा और गम । क्यों कि ये कलाकार जब कोठियों से अपनी असलियत प्रकट होने पर गए छक्रियाय तो इनकी नेतागिरी में भी हो गया कट । ठीक वैसे ही जैसे कि छट गई है कांधों तक पड़ी हुई इनकी लट ।

परिणाम यह हुआ कि अब माले मुफ्त दिले बेरहम का सिलसिला हो गया बन्द । पहले बिना कुछ करे धरे ही जो हो जाती थी मोटी आय वह भी न रही । अतएव हो गई इनकी किरकिरी ।

तो फिर क्या हुआ सदानन्द जी । टोटा और नफा, दुःख और सुख यह तो जीवन का क्रम है ! सदा दिन एक से नहीं रहते यही तो जीवन का मर्म है ।"

"वह तो है जिज्ञासानन्द जी । किन्तु यहां मामला है कुछ निराला । पति निखट्टू तो पत्नी कर्म परायणा । अब माले मुफ्त दिले बेरहम बन कर जिस बड़े घर से जीम रहे थे आचार्य निःपरिश्रम । किन्तु वह सिलसिला हो गया बन्द तो घबरा गए आचार्य प्रभु कृपानन्द । अब उन्होंने अपनी कथनी करनी का दिखाया मतभेद । क्योंकि हो जाय उनके रेशमी कुर्ते की भरी जेब में छेद । बेचारी पत्नी पर अपनी खीझ रहे हैं उतार । दिन रात फरमाते

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हैं तुम करती हो नौकरी और मैं हूं मलंग। जो भी कमाती हो मेरे हाथ पर धरो।"

"इसमें तो कोई अपराध नहीं। पति और पत्नी दोनों तो एक है जान।"

'भाई जिज्ञासानन्द। यह तो है सही किन्तु वह क्या करे बेचारी। जो भी कुछ पाती है, उसी से तो घर संसार चलाती है। राशन मंगाती है, पतिदेव की नेतागिरी के लिए उनके वस्त्र कपड़े आदि भी जुटाती है। पतिदेव को है छपासे की भूख। अतः उसके लिए चाहिए धन। वह बेचारी कैसे करे जतन।"

'तो अब क्या करते हैं आचार्य प्रभु आनन्द। क्या फेंक रहे हैं कोई नया फंदा। चला रहे हैं कोई गोरख धंधा।"

"हां वही तो सुना रहा हूँ। किस्सा बीता जो भी है, आपको बता रहा हूं। अब स्वयं को कहने वाले समाज की नैया का कर्णधार। पत्नी से करते हैं हाथापाई। देखिए न गृहस्थ आश्रम की कैसी आदर्श छवि है न उन्होंने जनता को दर्शाई। सुना है कि इनकी सारी पहलवानी बन गई है बेचारी पत्नी के गम की कहानी। आखिर यह है क्या तमाशा। देख-देख कर हमें होती है भारी निराशा। यह क्या कर रहा है मेरा भगवान। अबला बेचारी पर यह व्यवधान।"

"भइया सदानन्द। हमें तो कुछ भी नहीं लग रहा है अजीब। क्योंकि यह तो देव दयानन्द का कथन ही सत्य सिद्ध हो रहा है। इसीलिए तो हमें बताया था—अनमेल विवाहों से दूर रहने को चेताया था। यह विवाह भी तो था सर्वथा अनमेल। परस्पर विरोधाभासों का ही एक खेल।"

"आखिर उपाय तो बताइए। जिससे सुलझे यह विवाद और बढ़े न कोई फिसाद। जिज्ञासानन्द जी आप भी हैं ज्ञानी। कोई विधि तो चाहिए आपको ही बतानी—सुनकर यह सारी कहानी।"

"सुनो भइया सदानन्द। इसका एक ही है उपाय। वह यह कि इस निरक्षर भट्टाचार्य को उसके सही स्थान पर ले आइए। आप ही लोगों ने उसे चूहे से बिल्लो—बिल्ली से भेड़िया और बनाते बढ़ाते बनाया है शेर उसे पुनः चूहा बनाइए। उसको लगे मयूर पंखो रूपी पदों और उपाधियों से उससे करा दीजिए मुक्त। पंचतंत्र रहा है बता—भली भांति जता। पुनः मूषिको भव का उपाय अपनाइए। उनके होश ठिकाने लगाइए। जब वह आ जाएगा अपनी औकात पर तो फिर भूल जायगा छकड़ी। तरबूज जो बना जा रहा है उसे बना दीजिए पुनः ककड़ी। बस फिर बच जाएगी वह बेचारी। यही समझ सकी है बुद्धि हमारी। बन्द हो जाएगी धमाधम। उसे याद आ जाएगा अपना असली धर्म। देव दयानन्द ने भी तो बताया है यथा योग्य व्यवहार से ही होता है स्थिति में सुधार।"

विचार प्रवाह

वास्तविक महापुरुष कौन?

संसार में रहते हुए सामान्य संसारी जनों के तुल्य अन्य लोगों के स्वर में स्वर मिलाते हुए जीवन जीना तो कोई कठिन प्रक्रिया नहीं। सरिता की धारा में प्रवाह के साथ सामान्य तिनका भी बहते हुए सैकड़ों मील की यात्रा तय कर लेता है। इस उपक्रम में उसे कोई प्रयास भी नहीं करना पड़ता, बाधा भी नहीं झेलनी पड़ती। प्रत्येक सही या गलत बात पर तथास्तु कह देना तो जीवन जीने की नितांत ही सरल और सुगम सी विधि है। यह एक पृथक तथ्य है कि इस प्रक्रिया में हमें अपने मन को मारना पड़ता है। ऐसा व्यक्ति सामान्य है विशिष्ट नहीं। वह चलता तो है किन्तु दूसरों के सहारे। वह बढ़ता तो है किन्तु मन मारे। हो सकता है इस प्रवाह में राह पर चलते ऐसे पथिक को जीवन में भौतिक सुख और समृद्धि का भी कभी अभाव अनुभव न हो पाता हो।

व्यक्तियों की एक और श्रेणी भी है जो जगत के प्रवाह में अपनी राह नहीं बनाती। इस श्रेणी के सुधिजन समाज से स्वयं को काट कर एकांत में जीवन यापन करते हैं। ये एकांतवासी जन अपने मन और आत्मा के पथ पर चलते हैं। उन्हें सांसारिक बातों से कोई सरोकार नहीं रहता। इस श्रेणी के लोगों को हम सामान्यजन की अपेक्षा विशिष्ट प्रवृत्ति एवम् प्रकृति के व्यक्ति के रूप में मान्यता प्रदान करते है। ऐसे एकान्तवासियों को अनेक लोग सिद्ध एवम् साधकों के रूप में भी जानते एवम् मानते हैं।

प्रथम श्रेणी के व्यक्ति सामान्य जन हैं तो ये एकान्तवासी सज्जन भी महापुरुष की संज्ञा से विभूषित नहीं किए जा सकते।

अतएव प्रश्न उपस्थित होता है कि वास्तविक अर्थों में महापुरुष कौन हो सकता है। वस्तुतः महापुरुष ऐसा व्यक्ति ही हो सकता है कि जो सबके बीच अर्थात् समाज के मध्य रहते हुए भी एकान्तवास की स्वतंत्रता का संपूर्ण माधुर्य के साथ उपयोग करने में स्वयं को समर्थ बना लेता है। वह समाज में रहकर भी समाज में आसक्त नहीं हो पाता। यही निरासक्ति ही है उसकी महानता। उसी के कारण वह प्रेरणा का प्रदाता और जन-जन का पथ प्रदर्शक बनता है। ऐसा व्यक्ति ही वरेण्य है।

—वचनेश

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—श्री चन्द्रशेखर

दो घातक विष : चाय एवं अंडा

आज देश में चाय पान एवम् अण्डा भक्षण अत्यधिक बढता जा रहा है। जबकि मानव शरीर के लिए ये दोनों ही विष के तुल्य हैं। किसी लेख में मैंने यह पढ़ा था कि चाय में आठ प्रकार के विष सयुंक्त है। ये हैं : टैनिन, कैफिन, थीन,पैफिन, साइनोजन, स्ट्रिकनाइन, साइनाइड तथा ऐरोमैटिक आयल। यह कहां तक सत्य है यह तो अन्वेषण का विषय है। इस संबंध में भी खोज की जानी अपेक्षित है कि चाय में मिले हुए इन द्रव्यों से मानव शरीर कहां तक क्षति ग्रस्त होता है, किन्तु तथ्य को पूर्ण रूपेण नकारना कठिन ही है कि चाय में विष का कोई न कोई अंश तो अवश्य ही है।

इन दिनों जनसाधारण में ब्रढ़ती हुई दूसरी लत है अण्डा भक्षण। अब तो अनेक तथा कथित प्रगतिशील परिवारों में प्रात: काल का नाश्ता भी अण्डे के बिना पूर्ण नहीं माना जाता और बालकों को नित्य प्रति दो-दो अण्डे गटकवा कर उन्हें स्वस्थ बनाने का स्वप्न अभिभावक जन अपने मन में संजोते हैं।

अण्डे के संबंध में भी दो विदेशियों द्वारा प्राप्त जानकारी मैंने इनके लेखों में पढ़ी है। जो इस प्रकार है।

अण्डे की जरदी, अण्डे का नितांत खतरनाक अशं है। इसमें केलि स्ट्रील नामक भयानक विष पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है। यह विष एक प्रकार का चिकना एल्कोहल होता जो जिगर में जाकर जमा होता है। और हृदय से रक्त ले जाने वाली नाड़ियो में अवरोध उपस्थित करता है।

इससे हृदय रोग, उच्च रक्त चाप तथा मानसिक रोग एवं पित्त की थैली में पथरी और जोड़ो में दर्द हो जाता है। आज जैसे-जैसे चारों और अण्डों का प्रचार बढ़ता जा रहा है, वैसे-वैसे दिल की धड़कन बन्द होने से मौत भी बढ़ती जा रही हैं।

—डा० जे० एमन विलल्कन्ज,
—डा० कै थोराइन नम्मो,

"अण्डे की सफेदी अण्डे का सबसे अधिक खतरनाक भाग है। अण्डे की सफेदी में 'एवीडिन' नामक जहरीला मच्छर पाया गया है जो कैंसर, एग्जिमा, चर्मरोग, लक्वा, शरीर की सूजन जैसे भयंकर रोगों का कारण होता है।

—डा० आर० जे० विलियम
—डा० इरविंग डेविडसन

उपर्युक्त दो विषयों पर अनुसन्धान किसी प्रामाणिक संस्था द्वारा करा कर ट्रस्ट के रूप में प्रकाशित किया जाना चाहिए।

जैसा कि कहा जाता है 'जैसा अन्न वैसा मन' इसी चीज का प्रचार आर्य समाज करता है तो क्यों न आप इन दोनों (पेय तथा खाद्य पदार्थों) पर अनुसन्धान करा वास्तविता से लोगों को परिचत करा कर यश तथा कर्तव्य के भागी बनें।

प्रभु तुमको भूलूं अवस्था न कोई

प्रभो ! तुमको भूलुं अवस्था न कोई।
उज्ज्वल हो जीवन भावना समुज्ज्वल,
अभिलाषा यही ईश तुमसे है मेरी ;
दृष्टि करे वृष्टि वन्धुत्व कोमल,
मात्र वर दे निछावर हूं सब पे हरी ;
आलम्बन नैराश्य किंचत न होई प्रभो०।
हो न इच्छा कभी ही सुवर्ण की मुझे,
जीवन कर्त्तव्य करते ही मानव कहाई ;
सहृदय सर्व हों कामना ही न हो,
तुम हो सहचर मेरे, न अहंकार होई ;
चिरन्तन भी गति शीलता ही संजोई प्रभो०।

=हनुमान प्रसाद

अपना सामान्य ज्ञान बढ़ाइए

—विश्व का विशालतम नगर है टोकियो। इसकी जनसंख्या है १,२१,००,०००।

—विश्व में सबसे बड़ा महल है वैटिकन (रोम)।

—विश्व में सर्वाधिक ऊंचाई पर स्थित नगर है फारी, जो तिब्बत में है।

—विश्व का सबसे बड़ा महासागर है प्रशान्त महासागर। जिसकी गहराई है ३६,१९८ फुट।

—विश्व की सबसे लम्बी जहाजी नहर है स्वीडन में। इसका नाम है गोरा और लम्बाई है ११७ मील।

—हर्षवर्धन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(पृष्ठ १० का शेष)

भेषज वायु का निर्माण होगा और वायु प्रदूषण दूर होगा।

चतुर्थ प्रकार के हवि द्रव्य-सुगन्ध द्रव्य

जो पदार्थ सुगन्धित हैं तथा आरोग्यता देने वाले हैं उनका भी प्रयोग करने से वायु प्रदूषण का निराकरण होगा। वातावरण दुर्गंध रहित, प्रसन्नतादायक तथा आरोग्यता उत्पन्न करने वाला बनेगा। इस श्रेणी के द्रव्य नागरमोथा, कपूरकाचरी, बच, कपूर, अगर, तगर, पानड़ी, तुलसी, खस, गुलाब, केवड़ा, चम्पा, गूगल, राल, लोबान धूपकाष्ठ, नागरकेशर, जटामांसी, सुगन्ध कोकिला, चन्दन आदि अनेक पदार्थ हैं। इनका भी उपयोग भेषज-वात के निर्माण में लेना आवश्यक है। ये द्रव्य वायुमंडल को शुद्ध एवं सुगन्धित करने में परम समर्थ है। इस प्रकार वायु प्रदूषण नष्ट हो सकेगा।

पंचम प्रकार के हविद्रव्य-पौष्टिक पदार्थ

जिन ओषधि, वनस्पति, कन्द, मेवा, फल, दूध, अन्नादि पदार्थों के सेवन करने से शरीर में पुष्टि होती है उन पदार्थों को भी आहुति के रूप में प्रयुक्त करना चाहिये। इससे वातावरण में पुष्टि गुण की वृद्धि होती है। थोड़े से घृत युक्त अन्नादि पदार्थ को दूध, गुड़, शक्कर आदि के साथ मिलाकर जब चूल्हे की अग्नि में घर में आहुति देते हैं तो उसका प्रभाव तत्काल गृह के वायुमण्डल में व्याप्त हो जाता है और वातावरण में परिवर्तन अनुभूत होता है। अतः प्रदूषित वायु मण्डल के शोधन में पौष्टिक पदार्थों की आहुति भी यज्ञ में देने से अवश्य लाभ होगा।

अणुबम विस्फोट जन्य प्रदूषण का निराकरण

अणुबम विस्फोट से वायु प्रदूषण अतिविनाशक होता है। यदि इसके परीक्षण या प्रयोग बढ़ते ही जावेंगे तो वायु प्रदूषण उग्र विनाशक रूप धारण करता जायगा। इसका निवारण भी यज्ञ की प्रक्रिया से संभव है। जिस क्षेत्र में जितनी शक्ति का अणु विस्फोट प्रयोग करना है उसके विस्फोट प्रदूषण के अनुमानित क्षेत्र का निर्धारण करके उसके मध्य क्षेत्र और चतुर्दिक क्षेत्र में १ सप्ताह पूर्व से बड़े-बड़े यज्ञ कम से कम पांच स्थानों में करना चाहिये तत्पश्चात् विस्फोट परीक्षण ८ वें दिन करना चाहिये परीक्षण के ३ दिन पूर्व से संभावित प्रदूषण क्षेत्र की सीमा से पर्याप्त दूरी के वृत में ८ स्थानों पर ११ दिन के यज्ञ बड़े रूप में होने चाहिये। इससे अणु विस्फोट प्रदूषण का दुष्परिणाम विनष्ट होगा तथा संसार के वैज्ञानिकों को ज्ञात होगा कि यज्ञ जीवन दाता है और यज्ञ का त्याग कर देना मृत्यु को निमन्त्रित करना है। यह रहस्य यजुर्वेद अध्याय २ के मन्त्र २३—कस्त्वा विमुंचति सत्वा विमुंचति—में छिपा हुआ है। यज्ञ ही एकमात्र एवं श्रेष्ठ मार्ग है—

वायु मंडल के नित्य शुद्ध करने का उपरोक्त प्रकार हमारे देश में प्राचीन काल में प्रचलित था। जब से यज्ञ के करने-कराने का प्रकार बन्द हुआ और कल-कारखानों की वृद्धि होती गई तथा वायु शोधन करता वृक्ष, वन आदि का विनाश किया गया, वायु प्रदूषण वृद्धि को ही प्राप्त होता गया। अब इसके दुष्परिणाम वैज्ञानिक अनुभव करने लगे हैं तथा भविष्य निरापद बनाने के चिन्तन में भी लग गये हैं। ऐसे समय में यदि यज्ञ का प्राचीन वायु शोधन का प्रकार प्रचलित किया जावे तो सरलता से वायु प्रदूषण पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

-आर्यमुनि

स्वास्थ प्रद दोहे

प्रातः काल जो नियम से, जाय घूमने रोज।
बल बुद्धि दोनों बढ़े, मिटे कब्ज का खोज ॥

(२)

प्रबल भूख भोजन करे, तेल मले नित न्हाय।
राघव,, वह नर फिर कभी, नही दवाई खाय ॥

(३)

ठंडा जल सेवन करें जो कोई प्रातः काल।
होय उदर की सफाई, मिटे कब्ज जंजाल ॥

(४)

जो भी नियमित रूप से, करे रोज व्यायाम।
तन फुर्तीला रहेगा, क्या आलस का काम ॥

(५)

गाजर, बथुआ, आमला, जो खाय मनलाय।
क्षुधा बढ़े कब्जी मिटे, खून साफ हो जाय ॥

(६)

चाय तमाकू ड़ालड़ा जो ना, करे प्रयोग।
राघव,, उससे डरेंगें भांति २ के रोग ॥

(७)

हर्र बेहड़ा आमला चौथी, नीम गिलोय।
जो इसका सेवन करे सुन्दर काया होय ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज के प्रेमियों को सादर निमन्त्रण

★★

हरयाणा आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह में अब केवल एक सप्ताह शेष रह गया है। समारोह के प्रबन्धकों ने इसकी तैयारियाँ पूर्ण कर ली हैं। २७ मई को नगर पालिका के सामने वाले मैदान (पुराना राजकीय महिला कालेज) में आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता तथा हरयाणा में आर्य समाज की नींव अपने खून से सुदृढ़ करने वाले अमरशहीद भक्त फूलसिंह जी की स्मृति में इस मैदान में तम्बुओं का नगर आबाद हो जायेगा। एक बहुत बड़ा मंच तथा पण्डाल बनाया जा रहा है जिसमें एक लाख व्यक्तियों के बैठने की व्यवस्था होगी। आर्यसमाज के उच्च कोटि के साधु संन्यासियों, विद्वानों तथा राष्ट्रीय नेताओं तथा भारत की प्रभावशाली भजन मण्डलियों के कार्यक्रम से लाभ उठाने का शुभ अवसर आपको मिलेगा। रोहतक के इतिहास में पहली बार चारों वेदों से महायज्ञ १६ मई से दयानन्द मठ की भव्य यज्ञशाला में आरम्भ हो गया है। प्रात सायं दोनों समय वेद मन्त्रों के उच्चारण से सारा नगर गुंजायमान हो रहा है। आर्यसमाज के साहित्य के प्रचार तथा प्रसार के लिए भारत के प्रसिद्ध वैदिक साहित्य के विक्रेताओं की दुकाने लगाई जा रही है। जहाँ आपको आर्यसमाज सम्बन्धी सभी प्रकार की पुस्तकें मिलेंगी। आर्यप्रतिनिधि सभा हरयाणा की ओर से हरयाणा का आर्य समाज का स्मारिका जिसमें ऋषि दयानन्द सरस्वती के समय से आज तक का इतिहास है पढ़ने को मिलेगा। जिसका प्रकाशन इतिहास के विद्वानों द्वारा करवाया गया है। स्मरण रहे आज तक किसी भी संस्था की ओर से हरयाणा का इतिहास नहीं छापा गया। अतः यह ग्रन्थ हरयाणा के प्रत्येक कार्यकर्ता को पढ़ना चाहिए, ताकि अपने पूर्वजों द्वारा किये गये कार्य से प्रेरणा प्राप्त करके आर्यसमाज के प्रचार कार्य को आगामी शताब्दी में उपयोगी बना सकें। समारोह स्थल पर गत १०० वर्ष के आर्यसमाज के विस्तार के दिग्दर्शन के लिए के लिए प्रदर्शनी भी लगाई जा रही है।

आर्यो ! इस अवसर पर अपने सारे कार्य छोड़कर २८ मई को रोहतक अवश्य पधारें। आज तक इतना बड़ा समारोह सारे हरयाणा में नहीं हो सका है। रोहतक नगर की जनता आपके स्वागत के लिए उत्सुकतापूर्वक राह देख रही है। आप की सुख सुविधा के लिए कार्यकर्ता दिन-रात जुटे हुए है। आवास, भोजन आदि का समुचित प्रबन्ध हो चुका है। २८ मई को निकाले जाने वाले ऐतिहासिक जलूस के मार्ग पर स्वागत द्वारा, मीठे पानी की प्याऊ तथा ओ३म् के झण्डों से सजाया जा रहा है। अतः हरयाणा के प्रत्येक आर्य समाज, आर्य संस्थाओं के अधिकारियों से निवेदन है कि वे बसों, ट्रकों, साइकिलों तथा ट्रक्टरों आदि पर कपड़े का नामपट तथा ओ३म् ध्वज, लगाकर २८ मई को प्रातः १२ बजे तक आर्यसमाज शिवाजी कालोनी काट मण्डी पधार कर हरयाणा आर्यसमाज के संगठन तथा शक्ति के प्रदर्शन का परिचय देवें।

दर्शनाभिलाषी

—भरतसिंह स्वागत मंत्री

(शेष पृष्ठ २ का)

हमारी युग-युग पुरानी सभ्यता व संस्कृति का प्रतीक रही है, हर समय बदलती और हर समय बहती हुई। फिर भी यह वही गंगा है।"

जवाहरलाल भारत को विश्व के एक आधुनिकतम राष्ट्र के रूप में खड़ा करने के आकांक्षी थे किन्तु अतीत से सर्वथा कट कर अपना सब-कुछ हेय और अन्यों की सभी कुछ श्रेयस्कर की भावना को उन्होंने अपने मन में कभी स्थान न दिया था। इसीलिए तो उन्होंने वसीयत में ये प्रेरक शब्द भी अंकित किए थे ···फिर अपने को अतीत से पूरी तरह काटकर अलग कर देना नहीं चाहता। उस महान् विरासत व परम्परा पर जो हमारी है, मुझे गर्व है। मैं इस बात के प्रति भी जागरूक कि मैं भी सभी की तरह उस अटूट श्रृंखला की एक कड़ी हूं जो इतिहास के उषाकाल से युगों-युगों से चली आ रही है मैं इस श्रृंखला को तोड़ना नहीं चाहूंगा, क्योंकि मैं इसे धरोहर मानता हूं और उससे प्रेरणा प्राप्त करता हूं।···"

उस महान् राष्ट्र नायक की स्मृति में सादर श्रद्धायुक्त नमन। ☐

(पृष्ठ १२ का शेष)

आश्रय से सब आश्रम स्थिर रहते है ।।१।। जैसे वायु के आश्रय सब प्राणी है वैसे गृहस्थाश्रम सब आश्रमों का आश्रय है। बिना इस आश्रम के किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नहीं होता ।।२।। इसलिए जो मोक्ष और संसार के सुख की इच्छा करता हो वह प्रयत्न से गृहाश्रम को धारण करे। इसलिये जितना कुछ व्यवहार संसार में है उसका आधार गृहाश्रम है।

—जो यह गृहाश्रम न होता तो सन्तानोत्पत्ति के न होने से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यासाश्रम कहां से हो सकते।

—जो कोई गृहाश्रम की निन्दा करता है वही निन्दनीय है और जो प्रशंसा करता है वही प्रशंसनीय है।

—परन्तु तभी गृहाश्रम में सुख होता है जब स्त्री पुरुष दोनों परस्पर प्रसन्न, विद्वान् पुरुषार्थी और सब प्रकार के ज्ञाता हों। इसलिए गृहाश्रम के सुख का कारण ब्रह्मचर्य और पूर्वोक्त स्वयंवर विवाह है।

मुद्रक व प्रकाशक—पंडिता राकेशरानी द्वारा—दयानन्द संस्थान के लिए भारतिका प्रैस, दिल्ली में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन ज्ञान (साप्ताहिक)
वेद मन्दिर, १५६७ हरध्यानसिंह मार्ग
नई दिल्ली-११०००५ । दूरभाष : ५६६६३६/२०१५८४

रविवार
३० मई
१९७६

रजिस्टर्ड नं०
D (C) 619

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi